



पूर्वप्रकाशित ग्रन्थ।

---

१ लघीयस्त्रयादिसंग्रह—इसमें भट्टाकलंकदेवकृत लघीयस्त्रय सटीक, आचार्य अनन्तकीर्तिकृत लघु सर्वज्ञसिद्धि और बृहत्सर्वज्ञसिद्धि, तथा अकलंकदेवकृत स्वरूपसम्बोधन इन चार ग्रन्थोंका संग्रह प्रकाशित हुआ है। मूल्य ।=)

२ सागारधर्मामृत सटीक—पण्डित प्रवर आशाधरका यह प्रसिद्ध ग्रन्थ उनकी भव्यकुमुदचन्द्रिका नामकी संस्कृत टीका सहित छपा है। मूल्य ।≡)

३ विक्रान्तकौरव नाटक—कवि श्रीहस्तिमल्लकृत। जयकुमार और सुलोचनाकी कथापर यह सुन्दर नाटक रचा गया है। मू० ।=)

प्रकाशित होनेवाले ग्रन्थ।

५ मैथिलीकल्याण नाटक—कवि श्रीहस्तिमल्लकृत।मू० ०≡)
६ आशाधरकृत **प्रतिष्ठाकल्प**, ७ देवसेन सूरिकृत **नयचक्र**, **८ अंजनापवनंजय नाटक**—आदि और कई ग्रन्थोंके छपानेका भी प्रयत्न हो रहा है।

नोट—ग्रन्थमालाके सब ग्रन्थ बम्बईके सब जैन बुकसेलरोंके पास शोलापुर जैन बुकडिपोमें और दिगम्बर जैन पुस्तकालय सूरतमें मिल सकेंगे।

निवेदक—

नाथूराम प्रेमी, मन्त्री

हीराबाग, बम्बई।

प्रार्थनायें।

१ इस ग्रन्थमालाका प्रत्येक ग्रन्थ लागतकी कीमतपर बेचा जाता है। ग्रन्थोंका उद्धार और प्रचार करना ही इसका उद्देश्य है। अतः प्रत्येक धर्मात्माको इसकी सहायता करना चाहिए और अपने मित्रोंसे कराना चाहिए।

२ ग्रन्थमालाके लिए जो फण्ड हुआ है वह बहुत ही थोड़ा अर्थात् लगभग चार हजार रुपया है; पर यह काम इतना बड़ा है कि इसके लिए कमसे कम ५० हज़ारका फण्ड ज़रूर होना चाहिए। इसलिए इसके फण्डकी रकम बढ़ानेकी ओर प्रत्येक धनीका लक्ष्य रहना चाहिए।

३ धर्मात्माओंको इसके प्रत्येक ग्रन्थकी कमसे कम २५ प्रतियोंके स्थायी ग्राहक बन जाना चाहिए। यदि पच्चीस पच्चीस प्रतियाँ लेनेवाले सिर्फ २० और दश दश प्रतियाँ लेनेवाले सिर्फ ५० ही ग्राहक इसके बन जायँ, तो इसके द्वारा सैंकड़ों ग्रन्थोंका उद्धार सहज ही हो सकता है। ग्रन्थोंकी कीमत बहुतही कम होती है, इस कारण उनकी दश पच्चीस प्रतियाँ खरीद लेना साधारण गृहस्थोंके लिए भी कुछ कठिन नहीं है।

४ कमसे कम २५० प्रतियाँ खरीदनेवालोंका फोटो और स्मरण-पत्र इसके ग्रन्थोंमें लगाया जा सकता है, अतः इस ओर भी धनियोंको ध्यान देना चाहिए। ऐसा करनेसे धर्म और कीर्ति दोनोंकी साधना हो सकती है।

५ ब्याह शादी, जन्मोत्सव, प्रतिष्ठा, आदि प्रत्येक आनन्द कार्योंमें दान करते समय प्रत्येक जैनीको इस संस्थाका स्मरण रखना चाहिए और शक्तिके अनुसार जितनी बन सके उतनी सहायता इसकी करना चाहिए।

प्रार्थी–

हीराबाग पोस्ट. गिरगांव–बम्बई] नाथूराम, प्रेमी–मंत्री।

माणिकचन्द दिगम्बर–जैनग्रन्थमालाकी नियमावली।

१–इस ग्रन्थमालामें केवल दिगम्बर जैन सम्प्रदायके संस्कृत और प्राकृतिक भाषाके प्राचीन ग्रन्थ प्रकाशित होंगे। यदि कमेटी उचित समझेगी तो कभी कोई देशभाषाका महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ भी प्रकाशित कर सकेगी।

२–इनमें जितने ग्रन्थ प्रकाशित होंगे उनका मूल्य लागत मात्र रक्खा जायगा। लागतमें ग्रन्थ सम्पादन कराई, संशोधन कराई, छपाई, बँधाई आदिके सिवाय आफिस खर्च, ब्याज और कमीशन भी शामिल समझा जायगा।

३–यदि कोई धर्मात्मा किसी ग्रन्थकी तैयार कराईमें जो खर्च पड़ा है वह, अथवा उसका तीन चतुर्थांश, सहायतामें देंगे तो उनके नामका स्मरणपत्र और यदि वे चाहेंगे तो उनका फोटू भी उस ग्रन्थकी तमाम प्रतियोंमें लगा दिया जायगा। जो महात्मा इससे कम सहायता करेंगे उनका भी नाम आदि यथायोग्य छपवा दिया जायगा।

४–यदि सहायता करनेवाले महाशय चाहेंगे तो उनकी इच्छानुसार कुछ प्रतियाँ जिनकी संख्या सहायताके मूल्यसे अधिक न होगी मुफ्तमें वितरण करनेके लिए दे दी जायँगी।

५–इसमें ग्रन्थमालाकी कमेटी द्वारा चुने हुए ग्रन्थ ही प्रकाशित होंगे।

पत्रव्यवहार करनेका पता—

नाथूराम प्रेमी,

हीराबाग, पो. गिरगाव, बम्बई।

प्रार्थनायें।

१ इस ग्रन्थमालाका प्रत्येक ग्रन्थ लागतकी कीमतपर बेचा जाता है। ग्रन्थोंका उद्धार और प्रचार करना ही इसका उद्देश्य है। अतः प्रत्येक धर्मात्माको इसकी सहायता करना चाहिए और अपने मित्रोंसे कराना चाहिए।

२ ग्रन्थमालाके लिए जो फण्ड हुआ है वह बहुत ही थोड़ा अर्थात् लगभग चार हजार रुपया है; पर यह काम इतना बड़ा है कि इसके लिए कमसे कम ५० हजारका फण्ड जरूर होना चाहिए। इसलिए इसके फण्डकी रकम बढ़ानेकी ओर प्रत्येक धनीका लक्ष्य रहना चाहिए।

३ धर्मात्माओंको इसके प्रत्येक ग्रन्थकी कमसे कम २५ प्रतियोंके स्थायी ग्राहक बन जाना चाहिए। यदि पच्चीस पच्चीस प्रतियाँ लेनेवाले सिर्फ २० और दस दस प्रतियाँ लेनेवाले सिर्फ ५० ही ग्राहक इसके बन जावें, तो इसके द्वारा सैकड़ों ग्रन्थोंका उद्धार सहज ही हो सकता है। ग्रन्थोंकी कीमत बहुतही कम होती है, इस कारण उनकी दस पच्चीस प्रतियाँ खरीद लेना साधारण गृहस्थोंके लिए भी कुछ कठिन नहीं है।

४ कमसे कम २५० प्रतियाँ खरीदनेवालोंका फोटो और स्मरणपत्र इसके ग्रन्थोंमें लगाया जा सकता है, अतः इस ओर भी धनियोंको ध्यान देना चाहिए। ऐसा करनेसे धर्म और कीर्ति दोनोंकी साधना हो सकती है।

५ व्याह शादी, जन्मोत्सव, प्रतिष्ठा, आदि प्रत्येक आनन्द कार्यमें दान करते समय प्रत्येक धनीको इस ग्रन्थमालाका स्मरण रखना चाहिए और शक्तिके अनुसार जितनी बन सके उतनी सहायता इसकी करना चाहिए।

प्रार्थी-

[illegible]] नाथूराम, प्रेमी-मंत्री

माणिकचन्द दिगम्बर-जैनग्रन्थमालाकी नियमावली ।

१—इस ग्रन्थमालामें केवल दिगम्बर जैन सम्प्रदायके संस्कृत और प्राकृतिक भाषाके प्राचीन ग्रन्थ प्रकाशित होंगे । यदि कमेटी उचित समझेगी तो कभी कोई देशभाषाका महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ भी प्रकाशित कर सकेगी ।

२—इसमें जितने ग्रन्थ प्रकाशित होंगे उनका मूल्य लागत मात्र रक्खा जायगा । लागतमें ग्रन्थ सम्पादन कराई, संशोधन कराई, छपाई, बँधाई आदिके सिवाय आफिस खर्च, ब्याज और कमीशन भी शामिल समझा जायगा ।

३—यदि कोई धर्मात्मा किसी ग्रन्थकी तैयार कराईमें जो खर्च पड़ा है वह, अथवा उसका तीन चतुर्थांश, सहायतामें देंगे तो उनके नामका स्मरणपत्र और यदि वे चाहेंगे तो उनका फोटू भी उस ग्रन्थकी तमाम प्रतियोंमें लगा दिया जायगा। जो महात्मा इससे कम सहायता करेंगे उनका भी नाम आदि यथायोग्य छपवा दिया जायगा।

४—यदि सहायता करनेवाले महाशय चाहेंगे तो उनकी इच्छानुसार कुछ प्रतियाँ जिनकी संख्या सहायताके मूल्यसे अधिक न होगी मुफ्तमें वितरण करनेके लिए दे दी जायँगी ।

५—इसमें ग्रन्थमालाकी कमेटी द्वारा चुने हुए ग्रन्थ ही प्रकाशित होंगे ।

पत्रव्यवहार करनेका पता—

नाथूराम प्रेमी,

हीराबाग, पो. गिरगांव, बम्बई ।

माणिकचन्द्-

दिगम्बरजैनग्रन्थमालासमिति।

(प्रबन्धकारिणी सभाके सभ्य)

---

१ राय बहादुर सेठ स्वरूपचन्द हुकुमचन्द ।
२ „ „ „ तिलोकचन्द कल्याणमल ।
३ „ „ „ ओंकारजी कस्तूरचन्द ।
४ सेठ गुरमुखरायजी सुखानन्द ।
५ हीराचन्द नेमिचन्द आ० म जेस्ट्रेट ।
६ मि. लल्लूभाई प्रेमानन्द परीख एल. सी. ई. ।
७ सेठ ठाकुरदास भगवानदास जौंहरी ।
८ ब्रह्मचारी शीतलप्रसादजी ।
९ पं धन्नालालजी कासलीवाल ।
१० पं खूबचन्दजी शास्त्री ।
११ नाथूराम प्रेमी (मंत्री)

श्रीवादिराजसूरिः।

संति जैनेष्वेतादृशाः स्वल्पा ये: सुविख्यातस्यैकीभावस्तोत्रस्य कर्तुर्नाम नाकर्णितं स्यात्। परंतु ईदृशा जना द्वित्रा एव दुःसाध्या येरिदं ज्ञातं स्यात्कोयं वादिराजः, कदा बभूव, तस्य काभिः काभी रचनाभिः जैन-संप्रदाय उपकृतोऽभूत्। वयं पाठकानामग्रे अनेन लेखेनायास्यैव महानुभावस्य किंचित्परिचयं दिलामः।

वादिराजसूरिर्नन्दिसंघस्याचार्य आसीत्। तस्य परंपरायाः(अन्वयस्य) अरुंगलेति नाम आसीत्। परमयं नंदिसंघः स च नास्ति यस्य गणना चतुः संघानां मध्ये कृता भवति, किंतु द्रमिलस्य द्राविडस्य वा संघस्यैको गच्छो भेदो वास्ति। पाठकानां विदितं स्यात् यदस्य द्राविडसंघस्य स्थापकः पूज्यपादस्वामिनः शिष्यो वज्रनंदी आस्ति। अस्य गणना पंचजैनाभासेषु कृतास्ति। द्रविडदेशे मथुरादेश्यास्य नाम द्राविडसंघ प्रथितः। स दाक्षिणात्येति संभाव्यते। षट्तर्कषण्मुख-स्याद्वादविद्यापति- जगदेकमल्लवादी इत्याद्यनेकाः पदव्यस्तस्यासीत्। स सिंहपुरैकमुख्यस्त्रैविद्यविद्येश्वरश्रीपाल-

---

१. श्रीमद्रमिलसंघेऽस्मिन्नंदिसंघेऽस्त्यरुंगलः ।
अन्वयो भाति योऽशेषशास्त्रवाराशिपारगः ॥

२. गोपुच्छकः श्वेतवासो द्राविडो यापनीयकः ।
निःपिच्छश्चेति पंचैते जैनाभासाः प्रकीर्तिताः ॥—नीतिसारः ।

३ षट्तर्कषण्मुखस्याद्वादविद्यापतिगलु जगदेकमल्लवादिगलु एनिसिद श्री-वादिराजदेवरम् ।

[illegible]

[illegible]

[illegible]

श्रीहेमचन्द्र ... गाथाबद्धस्तूपितगणो ।
... श्रीमन्निर्मलकीर्ति ... ॥ १ ॥
... ।
... ॥ २ ॥
... ।
... ॥ ३ ॥
... ।
... ॥ ४ ॥

शाकाब्दे नगवार्धिचन्द्रगणिते ... शोभने
मासे कार्तिकनाम्नि शुक्लमहिते शुद्धे तृतीयादिने ।
सिंहे पाति जयादिके ... जैनी कथेयं मया
निष्पत्तिं गमिता सती भवतु वः कल्याणनिष्पत्तये ॥ ५ ॥

१ दिनेशिता ... ।
... ॥
इह ... 'अजितसेन' ... वर्णितं ।

* मम धीमन्निमाणो ...
श्रीमान्यस्य ... विभोः ।
... दयासाधनी ...—
... विग्रहे विग्रहः ॥ ४ ॥
(अजितसेनयतिः)



श्रीपरमात्मने नमः ।

श्रीमद्वादिराजसूरिविरचितं

श्रीपार्श्वनाथचरितम् ।

प्रथमः सर्गः ।

श्रीवधूनवसंभोगभव्यानंदैकहेतवे ।
नमः श्रीपार्श्वनाथाय दानवेंद्रार्चिताङ्घ्रये ॥ १ ॥
शुद्धदृग्घविनिर्मुक्ताः स्वायत्ता यस्य पादयोः ।
हिंसादोषक्षयायेव पुष्पवर्षधियं दधुः ॥ २ ॥
अप्रियत्वं तथा यस्य पूर्वदैत्येन निर्मितः ।
नगस्य महता निन्ये हृतकुंकुमपंकताम् ॥ ३ ॥
गुर्वोऽपि त्रिलोकस्य गुरोर्द्रोहादिवाढ्यः ।
लाघवं तृणवद् यस्य दानवप्रेरिता ययुः ॥ ४ ॥
भूगर्भादुद्गतनागचूडामणिमरीचिभिः ।
आवृता यस्य धैर्येणाभ्रराज्यत मेदिनी ॥ ५ ॥
आतपत्रं महाबोधेर्यस्य शुभ्रमिवांबुदं ।
पद्मिनी विभरामास पर्वतस्येव मूर्धनि ॥ ६ ॥

१ श्रीरेव वधूस्तस्या नवसंभोगेन भव्यानामानन्दस्य एको मुख्यो हेतुस्तस्मै । २ शुद्धः कुगिनो यो देवः कमठासुरस्तेन विनिर्मुक्ताश्च्युता । ३ कमठेन पूर्वजन्मनो वैरिणा । ४ उत्पतन ऊर्ध्वमागच्छतो नागस्य धरणेन्द्रस्य चूडामणिमरीचिभिः शिखामणिकिरणैः । ५ पद्मावती देवी ।

तापैस्तैर्वर्धिता यस्मिन् नित्योद्बोधैपरभ्रधे ।
अछिद्यंत घनेऽतुच्छाः स्वयं दुस्तर्कशाखिनः ॥ ७ ॥
ज्ञानामृतार्णवे यत्र चित्ते मज्जति दुर्जये ।
क्रोधदावाग्निसंतापो दानवेंद्रान्न्यवर्तत ॥ ८ ॥
प्रह्वदानवमूर्धन्यमणिरागेण यद्वपुः ।
यमायभ्रमिवाक्रांतं विद्युता श्यामलप्रभम् ॥ ९ ॥
निःकंपलोकवृत्तांतमीक्षमाणं यमीश्वरं ।
उपास्थिषत गीर्वाणाः कामचारभयादिव ॥ १० ॥
अनंतगुणसाम्राज्यलक्ष्मीकांतमुपांतिर्मम् ।
अघहंतारमर्हंतं वंदिषीय तमव्ययम् ॥ ११ ॥
अपि प्रहास्ये मोहे मे श्रेयस्कामितया प्रभोः ।
कथयं चरितं नाथस्थो दोषं न पश्यति ॥ १२ ॥
जडाशयोद्यमपि भव्यं तद्वचनं भवेत् ।
यज्जिनाभिमुखं पद्मसभ्यर्कं न तु शोभते ॥ १३ ॥
कुतस्तमो लयं याति वचोवातायनेन चेत् ॥
न विशेयुर्मनःसद्म सतां जिनगुणांशवः ॥ १४ ॥
अल्पसारापि मालेव स्फुरन्नायकसद्गुणा ।
कंठभूषणतां याति कवीनां काव्यपद्धतिः ॥ १५ ॥

---

१ कपिलादिभि । २ नित्योद्बोध केवलज्ञान तदेव परभ्रध परदुर्पस तस्मिन् । ३ दुस्तर्का दुष्टतर्का एव शाखिनो वृक्षाः । ४ नम्रीभूतकमठशिरोरत्नलौहित्येन । ५ नीलवर्णम् । ६ पूजयामासु । ७ कामस्य चारादाक्रमणात् भयेन । ८ अतिमतीर्थंकरस्य समीपवर्तिनं पार्श्वनाथमित्यर्थः । ९ मूर्खतये १० कल्याणवाञ्छया । ११ कथयामि । १२ जडाशयाद् मूर्खादुदयः प्रादुर्भावो यस्य तत् । पक्षे—डलयोरभेदात् जलाशयात्सरसः प्रादुर्भूतिरुत्पत्तिर्यस्य तत् । शीतगुणवज्जलादुद्भवमपि पद्मभुष्णगुणवत्सूर्याभिमुखं यथा शोभते तथा मूर्खोक्तं वचनमपि सर्वज्ञाभिमुखं शोभते । १३ वच एव वातायनं गवाक्षं तेन । १४ जिनेंद्रगुणा एव मरीचयः । १५ स्फुरंतः प्रकाशमाना नायकस्य चरित्रस्वामिनः, पक्षे—मालामध्यस्थितमणेर्गुणाः शौर्यक्षान्त्यादयः पक्षे सौगंध्यादयो यस्यां सा ।

प्रथमः सर्गः ।

अतुच्छगुणसंपातं गृध्रपिच्छं नतोऽस्मि तं ।
पक्षीकुर्वंति यं भव्या निर्वाणायोत्पतिष्णवः ॥ १६ ॥
स्वामिनश्चरितं तस्य कस्य नो विस्मयावहं ।
देवागमेन सर्वज्ञो येनाद्यापि प्रदर्श्यते ॥ १७ ॥
अचिंत्यमहिमा देवः सोऽभिवंद्यो हितैषिणा ।
शब्दाश्च येन सिद्ध्यंति साधुत्वं प्रतिलंभिताः ॥१८॥
त्यागी स एव योगींद्रो येनाक्षय्यसुखावहः ।
अर्थिने भव्यसार्थाय दिष्टो रत्नकरंडकः ॥ १९ ॥
तर्कभूवल्लभो देवः स जयत्यकलंकधीः ।
जगद्द्रव्यमुषो येन दंडिताः शाक्यदस्यवः ॥ २० ॥
स्याद्वादगिरमाश्रित्य वादिसिंहस्य गर्जिते ।
दिङ्नागस्य मदध्वंसे कीर्तिभंगो न दुर्घटः ॥ २१ ॥
नमः सन्मतये तस्मै भवकूपनिपातिनां ।
सन्मतिर्विवृता येन सुखधामप्रवेशिनी ॥ २२ ॥
जिनसेनमुनेस्तस्य माहात्म्यं केन कथ्यते ।
शलाकाः पुरुषाः सर्वे यद्वचोदर्पणवर्तिनः ॥ २३ ॥
आत्मनैवाद्वितीयेन जीवसिद्धिं निबध्नता ।
अनंतकीर्तिना मुक्तिरात्रिमार्गेव लक्ष्यते ॥ २४ ॥

---

१ उमास्वातिरिव यस्य गृध्रपिच्छापरनामक इति श्रवणबेल्गुलस्थशिलालेखत. प्रतीयते । २ पक्षस्थाने कुर्वंति साहाय्येनाश्रयंतीत्यर्थ ।३ ऊर्ध्वमुत्पतितुं शीलं येषां ते । मोक्ष गंतार इत्यर्थ । ४ समंतभद्राचार्यस्य । ५ तत्त्वार्थसूत्रमहाभाष्यस्य मंगलाचरणरूपेणाप्तमीमांसानामकेन स्तोत्रेण । ६ समंतभद्र । ७ रत्नकरंडश्रावकाचार । ८ अकलंकदेव । ९ शाक्या बौद्धा एव दस्यवश्चौरा । १० बौद्धाचार्य दिग्नागस्य । ११ सन्मतिविवरणनामकग्रंथकर्त्रे । १२ त्रिषष्ठिशलाका पुरुषा । प्राचीनमहापुराणा जैनसाहित्ये शलाका पुरुषा इति प्रोक्ता। १३ जीवसिद्धिलघुबृहत्सर्वज्ञसिद्धिग्रंथत्रयस्य कर्ता ।

कुतस्त्या तस्य सा शक्तिः पाल्यकीर्तेर्महौजसः ।
श्रीपदश्रवणं यस्य शाब्दिकान् कुरुते जनान् ॥ २५ ॥
अनेकभेदसंधानाः खनंतो हृदये मुहुः ।
बाणा धनंजयोन्मुक्ताः कर्णस्येव प्रियाः कथम् ॥ २६ ॥
यंदेवानंतवीर्याब्दं यद्वागमृतवृष्टिभिः ।
जगज्जिघत्सन्निर्वाणः शून्यवादहुताशनः ॥ २७ ॥
ऋजुसूत्रं स्फुरद्रत्नं विद्यानंदस्य विस्मयः ।
शृण्वतामप्यलंकारं दीप्तिरंगेषु रंगति ॥ २८ ॥
विशेषवादिगीर्गुम्फश्रवणाबद्धबुद्धयः ।
अक्लेशादधिगच्छंति विशेषाभ्युदयं बुधाः ॥ २९ ॥
चंद्रप्रभाभिसंबद्धा रसपुष्टा मनः प्रियं ।
कुमुद्वतीव नो धत्ते भारती वीरनंदिनः ॥ ३० ॥
कुशलानि विपच्यंतां यदि संति तथा मम ।
यावज्जीवं न पश्यामि दुर्जनं स च मां यथा ॥ ३१ ॥
अक्षमः सन् बुभुक्षायै तरक्षुर्न तथा क्षणं ।
मां विभीषयते यद्वदहेतुकुपितः खलः ॥ ३२ ॥
अथवाऽस्तु नमस्तस्मै दुर्जनायापि यद्भयात् ।
सप्रयत्नपदन्यासा न प्रमाद्यति मन्मतिः ॥ ३३ ॥
कलास्तस्य न वर्धंते चंद्रस्येव कलेरिव ।
कंठे विषग्रहो यस्य धूर्जटेरिव दुर्मतेः ॥ ३४ ॥

---

१ जैनशाकटायनव्याकरणकर्तुर्नाम कदाचित्पाल्यकीर्तिः स्यात् । २ शाब्दिकान् वैयाकरणान् । ३ बाणाः शब्दाः शराश्च । ४ अर्जुनस्तन्नामा द्विसंधानकाव्यकर्ता कविश्च । ५ श्रवणस्य कुंतिपुत्रस्य च । ६ प्रमेयरत्नमालानामकग्रंथकर्ता स एव मेघस्तम् ७ नष्टोऽभूत् । ८ श्लोकवार्तिकालङ्कारम् । ९ विशेषवादिनामाचार्यस्य गीर्वाणी तस्याः गुंफः रचना तस्याः श्रवणे आबद्धा बुद्धिर्येषां । १० चंद्रप्रभचरितेतिकाव्यसंबंधिनी । ११ व्याघ्रः । १२ प्रयत्नपूर्वकरचनायामुद्यता । १३ प्रमादमाचरति । १४ दोषग्रहः पक्षे ।

दुर्जनस्य यदुच्छिद्रं तत्प्रवेष्टुमनीश्वराः ।
प्रविशन्ति गुणाधिक्यं निश्छिद्रं धीमतां मनः ॥ ३५ ॥
तस्मात् सतामुपस्कारं सत्प्रयासो व्यपेक्षते ।
सलिलाकरजः शुद्ध्यै तज्ज्ञस्येव क्रियाविधिम् ॥ ३६ ॥
अस्ति भारतवर्षेऽस्मिन् जनान्तः शान्तकल्मषः ।
सुराभिरतिहेतुत्वात् सुरम्यात्यस्तनूभृताम् ॥ ३७ ॥
घ्राणेलिप्समलं व्योम शालीयामोदवासितं ।
घनानैरपि विमर्शीव यत्र कालेयवलाहकम् ॥ ३८ ॥
भुज्यमाना जनैः स्वैरं यस्मिन्नुद्भासिताम्बराः ।
न त्यजंति धुर्लीमर्थ्यं धान्यपाकसमृद्धयः ॥ ३९ ॥
दान्तो यत्र सुयो राज्ञायुक्तिमुपनिधिर्दीसयः ।
अयातसालिपाकेषु पामराणां प्रवर्तते ॥ ४० ॥
सस्यैर्पूर्णाशुरा यत्र श्यामाङ्गाः प्रसवोन्मुखीः ।
आपगाः स्वपयःपुराः पश्यंतीयांसुजैषणाः ॥ ४१ ॥
नद्यः स्फटिकपाषाणश्रीभिर्भिर्यत्र पूरिताः ।
वहंतीव सुधां शुष्केर्यानेऽपि वृहदम्भसः ॥ ४२ ॥
दक्षयो यत्र घाटेषु पाकभंगगलद्द्रुमाः ।
प्रयान्तीय प्रवल्गन्ति पांथश्रमनुदाममुं ॥ ४३ ॥
वनेषु यत्र कर्पूरद्रुमरेणुसुगंधयः ।
माधवीमुपगूहन्ते मारुता वधुवल्लभीः ॥ ४४ ॥

---

१ गुणाधानेऽर्थे कृष्णधानो गुरु । २ भरतक्षेत्रे । ३ भ्रमन्तोऽलय एव भ्रमर
यत्र तत् । ४ शालीनामामोदेन सुगंधिन । ५ कृष्णमेघम् । ६ उद्भासितानि
गंधयुक्तानि अंबराणि यासां । पक्षे—उद्भासित अंबरमाकाशं यामिस्ता. । ७ ...
पृथिव्यां लीनत्व । अन्यत्र—उपयुद्धविनत्वम् । ८ यथा स्वपयसा दुग्धेन परिपुष्ट
पुत्रं प्रमोदमुन्मुखीबाला मातर पश्यंति तथैव स्वपयसा जलेन पुष्टिगता सम
वृद्धीनेधः कमलरूपनेत्रं प्रेक्षंते । ९ ग्रीष्मर्तावपि । १० ... शाखेल या
सा. । ११ पथिकजनक्लान्तिकारिणीं तृषां मुष्णातीति तस्मै ।
...२६। इति चतुर्थी ।

कुसुमानि सुगंधीनि निष्कुटे यस्य वीरुधां ।
पिबंति भ्रमराः स्त्रीणां मुखे वक्त्राणि पद्माः ॥ ५५ ॥
मर्त्यानां सहजं बाल्यं नवयौवनसंपदे ।
यत्र पूतां मनःशून्यं निर्वेदेनेव गच्छति ॥ ५६ ॥
यत्र दुग्धच्छटानुग्राहिश्वैत्यं सौधैरपहायतां ।
सर्वाङ्कदारविशेषा रागोपादानहेतवः ॥ ५७ ॥
वेदीरत्नप्रसोत्कीर्णाः प्रासादाः यत्र पांडुराः ।
सेंद्रचापपयोदसंगविभ्रमं साधु बिभ्रते ॥ ५८ ॥
गृहाग्रोपलरत्नानां स्फुरंत्यो रश्मिसूचयः ।
दिवाऽपि यत्र कुर्वंति शंकामुल्कासु पश्यताम् ॥ ५९ ॥
आस्तीर्णा विपणिर्यत्र मरकतमाणिक्यरोचिषा ।
प्राप्ता बालातपेनेव व्योमपार्श्वयलिप्तया ॥ ६० ॥
यत्रेंद्रनीलनिर्माणगृहभित्त्युपस्थिताः ।
हेमवर्णास्त्रियो भांति कालाभ्रेष्विव विद्युतः ॥ ६१ ॥
मघमोत्तंभिता यत्र पताकाः पीतभासुराः ।
भायंत्यघने व्योम्नि क्षणदीधितिविभ्रमम् ॥ ६२ ॥
हरिन्मणिमयारंभामुन्मयूखां त्रिविष्टपा ।
दूर्वांकुरधिया यत्र वत्सा धावंति देहलीम् ॥ ६३ ॥
अगाधोऽन्वायमंगत्रो गुणी कर्कशदंडभृत् ।
अर्थविद्यादयस्तत्र राजा श्रीनिलयोऽभवत् ॥ ६४ ॥
भातुं दिक्चक्रमाक्रामत्प्रद्वितीयेन तेजसा ।
ध्यान्भुवनं जहासेव स सहस्रेण तेजसा ॥ ६५ ॥

---

१ गृहारामे । २ वृक्षाणाम् । ३ दुग्धवत्शुभ्रा । ४ सेवनस्य–अदनस्य च ।
५ रागस्य प्रेम्णो लौहित्यस्य च । ६ आकाशगमनसमये कार्यकारित्वादेव लब्धु-
मिच्छया । ७ इन्द्रनीलमणिनिर्मितगृहाणां भित्ती समुपस्थिता । ८ कृष्णमेघानु-
पस्थिता इत्यर्थः । ९ विद्युद्विभ्रमम् । १० अत्तुं खादितुमिच्छया । ११ प्रभूत-
धान्यसमृद्धिशाली ।

स मनोज्ञकलाकांतिरुद्यदारक्तमंडलः ।
राजा मृदुकरोल्लासैः कुमुदानंदमादधौ ॥ ६६ ॥
तादृशी पावना तस्य तं गच्छंतं करेच्छया ।
शिरोद्वारप्रदानाय शत्रवोऽपि यदभ्यगुः ॥ ६७ ॥
आज्ञया कृतमर्यादे भुवने तस्य मध्यमे ।
सोऽट्टप्राकारखातायाः शोभायै पत्तनादिषु ॥ ६८ ॥
तस्य धर्मभृतो युद्धे गुणारोपितशक्तयः ।
पत्रिणोऽपि स्थिरायस्यानुदास्यन्नयनीभृतः ॥ ६९ ॥
कामवर्षी स सर्वस्मिन्भुवनेष्वधिकक्रियः ।
तथापि जलदस्येव षड्गुणाः सन्मथस्थितेः ॥ ७० ॥
निर्गतं छिन्ननम्नस्य न लक्षादूनमाननात् ।
प्रलयपर्यंत मंतव्यं तथापि मितभाषिणम् ॥ ७१ ॥
धर्म्यमामाधिपाकं स लोकस्थित्या यदन्नपि ।
विचिकाय न कस्यापि चित्तेऽपायं दयापरः ॥ ७२ ॥
संयतोऽपि सदाऽध्यक्षैः करणग्रामवर्तिभिः ।
अनन्यः सन्नुपालब्धधर्म्यमूलमर्थमनश्वरम् ॥ ७३ ॥
जनस्य क्षुण्णमार्गेण दीर्घयात्रां प्रकुर्वतः ।
श्रमतापहरास्तस्य प्रपा इव विभूतयः ॥ ७४ ॥
सुप्तोऽपि चक्षुषा पश्यन् जगत्तेजोमयेन सः ।
देहेन दर्शयामास मार्गमुन्मार्गगामिनाम् ॥ ७५ ॥
कोशगर्भान् स आकृष्टाहानार्थं शत्रुरत्नयोः ।
कोपप्रसादयोरस्मिन्निमयापदरिमित्रयोः ॥ ७६ ॥

---

१ मनोहरा चतुर्थ्यंशकला कान्तिर्यस्य, पक्षे–कला षोडशो भागः । २ उदये प्रादुर्भवत्समये ईषद्रक्तमंडलत्वात् । ३ नृपश्चंद्रश्च । ४ कोमलकिरणाना-मुल्लासैः पक्षे राजदंडवन्यूनभावे । ५ पृथ्वी । ६ धेनुर्भवदनाय । ७ महस्य स्मृत्य । ८ प्रास्फुरन्, अदृश्यंश्च । ९ । मेरदे- । १० अजानुगामिवर्तिभिः । ११ 'प्रपा पानीयशालिका' इत्यमरः ।

दुःखकृपात् प्रजा भूपः स चिरं जैत्रविक्रमः ।
यदुद्धार दूरेऽपि भुजेनाजानुलंबिना ॥ ७७ ॥
तस्याराधयतो धर्मं नित्यं तत्परया धिया ।
अनस्यतां न कामार्थावभोगादिव भूपतेः ॥ ७८ ॥
तद्गुणामृतसंपानात् स्वयं कामदुघा मही ।
तत्फलानुभवे यत्नः प्रजानामवशेषितः ॥ ७९ ॥
तस्य गृहमविदन्नोजो द्वयमन्यद्विव प्रजाः ।
अप्रभुत्वं काले प्रच्छन्नस्यापि कर्मणः ॥ ८० ॥
हितपाकं प्रजानां स दारमायस्य तेजसा ।
दुर्वृत्तेऽपि प्रचाय्ये न कृष्णवर्त्मा गुणिर्गुणः ॥ ८१ ॥
तं कुमारदमागताय विश्वभूतिं प्रभाविनम् ।
उपायेदं वचो मंत्री विश्वभूतिर्विशांपतिम् ॥ ८२ ॥
देव दैवांगनापांगकटिगोचरगुणा गुणाः ।
किमर्थं नायिपेरस्ते मानुषोत्तरमूर्धनि ॥ ८३ ॥
त्वयि शासति लोकस्य श्रियमेव गुणोत्तरं ।
प्रपीडयति मामेव केवलं प्रबला जरा ॥ ८४ ॥
देव ! पश्य जपाधारा विद्युत्ता रक्ताम्बरः ।
जरसा जरठा. शंतो निर्भर्त्स्यते मम द्विजाः ॥ ८५ ॥
धार्ष्ट्यक्षयविश्वयेन स्खलतोऽनुपदं मम ।
चित्तशुद्धेव निर्यस्या दृश्यते पांडुरं शिरम् ॥ ८६ ॥
दौर्बल्यं मम दृष्ट्वेव आरिणो जनगर्हितं ।
दुःप्रयच्च वर्तते स्वकार्ये चक्षुरादयः ॥ ८७ ॥

---

१ जयशीलपराक्रमवान । २ अभोगत इव । ३ मही तद्गुणादेव प्रमविनीलतो प्रजानां तद्भाव एव यत्नोऽवशिष्ट । ४ तत्समये । ५ हीनचरित्रोऽपि च । ६ सुरस्त्रीकटाक्षविक्षेपवन शुभा । ७ मानवे । ८ रक्तवस्त्रधारिण । ९ निर्भर्त्सना । १० दुष्प्रत्यवन ।

जरसेयं सपत्नीव मद्रागानपवर्तिनी ।
प्रतिहंति च कांतानां मन्मथागमकौतुकम् ॥ ८८ ॥
प्रेरितः प्राग्दौर्बल्यमनिगड्भियोंऽमुना ।
मां प्रागयानयं दंडः पुरस्तादिव मृत्युना ॥ ८९ ॥
वयसा परिणमिनेदमत्यंतोपात्तकालं ।
उपोषमिव तृष्णायां निरोधति शिरो मम ॥ ९० ॥
ततो मामनुमन्येथा जिघृक्षुं जिनदीक्षितं ।
पयःपाकानेगागेऽयमन्यथा मां न मुंचति ॥ ९१ ॥
यदि दर्शितं जैनीयं कः पुमान्योगमर्पति ।
गंभीरं भवपातालमपिसौमृगतृष्णया ॥ ९२ ॥
इति विज्ञाप्य राजानमाश्वास्यांतःपुरे प्रियां ।
निषिध्यानुगतौ पुत्रौ स प्रतस्थे तपोवनम् ॥ ९३ ॥
कमठे सत्यपि ज्येष्ठे तस्य पुत्रं गुणाधिकं ।
मरुभूतिं महीपालः सान्निध्ये प्रत्यतिष्ठपत् ॥ ९४ ॥
अमात्यलक्ष्मीमासाद्य स बभार वसुंधरां ।
समुद्रमेखलाकांतां प्रियामपि वसुंधराम् ॥ ९५ ॥
आकृष्टास्तस्य मंत्रेण परेषामपि संपदः ।
अनुरागप्रकर्षेण समाश्लिष्यन्महीपतिम् ॥ ९६ ॥
सर्वंसहदर्शनोपायं श्रवणानुगतायतिं ।
नृपस्तमात्मनो मेने तृतीयमिव लोचनम् ॥ ९७ ॥
नीरसंभृतया तेन तीक्ष्णयाऽजिह्मधारया ।
बुद्ध्या निस्त्रिंशयष्ट्या च बिभिदे मर्म शात्रवम् ॥ ९८ ॥

---

१ आगमिष्यता । २ जरसा । ३ वृद्धावस्थाया निगलनम् । ४ जिनोपदिष्ट-सम्यग्दर्शनादिचतुर्थं विना सर्वे एव मिथ्याज्ञानरूपमृगतृष्णावशाद् जन्मकूपे पतंतीत्यर्थः । ५ धरिणीम् । ६ एतन्नाम्नी स्त्रीम् । ७ उभयत्रापि समानम् । ८ जलसहितया, नीरसं दुहृदं मृतया धारया दंडयिष्मेत्यर्थः ।

भोगतृष्णातुरे पूर्वे कमठे पारणीप्रिये ।
स धावन् स्नेहसंबंधात् परां भक्तिमदर्शयत् ॥ ९९ ॥
पौदनस्यामिनो मारमादिश्य सचिवाग्रजं ।
सामात्यः प्रययौ राजा वज्रवीरजिगीषया ॥ १०० ॥
बलेन बलतस्तस्य भाराक्रांता समंततः ।
प्राग्वैपावनता धात्री पश्चाद् मार्गे महीभृतः ॥ १०१ ॥
अनेकभूभृदाराध्या दिक्प्रसिद्धमतंगजा ।
सानुरागवती तस्य धरेव चलिता चमूः ॥ १०२ ॥
भूमीरजःकिरापांशोलम्याम्यागच्छतोऽद्रिभिः ।
स्वागतं जगदे नूनं सेनाघोषप्रतिस्वनैः ॥ १०३ ॥
जहि गुल्ममपस्कंद पंकमुद्धर कंटकं ।
गच्छन् प्रियं व्यथनेव स बली घनपद्धतेः ॥ १०४ ॥
औरुदर्भिरधुरस्कंधं राजन्यपरिवेष्टितं ।
प्रैतच्छत्रेण राजानं जनुर्जानपदा जनाः ॥ १०५ ॥
भूरजः सैन्यसंपातादुत्पपात नभःस्थलं ।
तस्य धूम इवाम्यप्रस्तेजोयस्हेर्ज्वलिष्यतः ॥ १०६ ॥
अयासीदरिमुद्दर्पं सपक्षं मधुपं तथा ।
संकुचत्यत्र संपत्ति यथा सौम्यो हिमागमः ॥ १०७ ॥
निर्गत्य वज्रवीरोऽपि सबलो नगराद् बहिः ।
प्रत्यर्दान्मदानाथं बाणवर्षैरणातिथिम् ॥ १०८ ॥
खड्गसंघट्टनोत्क्रांतस्फुलिंगैः शरमंडपैः ।
युद्धं व्योम्नि तयोर्धत्ते सतडिन्मेघविभ्रमम् ॥ १०९ ॥

---

१ वज्रवीरं जेतुमिच्छया । २ बहुतरनिमित्तवेष्टिना, पक्षे–असंख्यपर्वने । ३ दिक्षु ख्याता हस्तिनो यस्याः । अन्यत्र–दिग्गजाः । ४ भूधारकत्वादंधु । ५ समासे कप्रत्ययांतस्य पूर्वनिपातः । ६ येनांकितविकारेत्थंभावों । ११।१।१५ इत्थंभावे तृतीया । ७ जनपदे देशे भवा । ८ कुत्सितातिथिम ।

प्रहिता वज्रवीरेण श्यामपत्राः शिलीमुखाः ।
नारविंदमुपासर्पन्नपि तेजोविकस्वरम् ॥ ११० ॥
घननिर्घोषसंनादमंगान्मृदुरिवाभयन् ।
सदंडमरविंदस्य कर्कशं सोढुमक्षमः ॥ १११ ॥
भयेन धावतो युद्धादव्यवस्थितदिङ्नया ।
तस्याग्रे चारविंदस्य जयवार्ता जयाद् ययौ ॥ ११२ ॥
राजा पश्चात् समाक्रम्य करवैर्वधनिष्ठुरैः ।
करग्रहेण बुभुजे स वज्रनगरश्रियम् ॥ ११३ ॥
नृपतिरहितमेवं वज्रवीरं विजित्य
स्वपुरमभिजगामोद्दामलक्ष्मीसमेतः ।
विकचकुमुदताराहारशुभ्रं यशः स्वं
दिशि दिशि नयधूर्कर्गापयरिकुनरीघैः ॥ ११४ ॥
वातोन्नर्तितकेतुयष्टिभुजया व्याहूयमानस्तया
तात्पर्यादिव विप्रयोगविधुरामासाद्य रम्यां पुरीं ।
कुर्वन् जैनमहप्रबंधविधिना लोकस्य भूरिश्रियं
राजा वारिधिमेखलां वसुमतीं दीर्घं ररक्षाज्ञया ॥ ११५॥

इति श्रीवादिराजसूरिविरचिते श्रीपार्श्वजिनेश्वरचरिते
महाकाव्येऽरविंदमहाराजसंग्रामविजयो नाम
प्रथम सर्ग ।

---

१ बाणाः । २ प्रभूतपराक्रमनाशात् । ३ शत्रुम् । ४ प्रफुल्लकमलताराहार-वच्छुभ्रम् । ५ वातेनोन्नर्तिता उच्चर्नर्तिता केतुयष्टिरेव भुजा यस्यास्तया । ६ विप्रयोगेन वियोगेन विधुरां दुःखिताम् । ७ मह उद्धव उत्सव इत्यमरः ।

द्वितीयः सर्गः ।



अथैकदा तं वसुधाधिनाथाः पुरस्य वृत्तान्तविशेषवेदी ।
निवेदितात्मा सचिवद्वितीयं चरो नराधीश्वरमाससाद ॥ १ ॥
स भृत्यकञ्चुर्विनमत्करेण प्रणम्य भूमावुपविश्य वाग्मी ।
प्रभोर्नियोगात् स्वनियोगमेवं प्रचक्रमे वक्तुमनुक्रमेण ॥ २ ॥
शिरोभिरस्थं जगदीश्वराणामभिषेमुद्रं नृप ! शासनं ते ।
यद्यास्त्यखण्डयमिति तेन सर्वा दिशो नितान्तार्थमरीरिजत्सुभ्रम् ॥ ३ ॥
यशो विशुद्धं नृप ! तावकीनं कलङ्कितं सन् कमठेन मन्ये ।
विपक्षिकान्तामुखरञ्जनेन प्रावृट्पयोदेनेव हिमाद्रिकूटम् ॥ ४ ॥
त्वयि प्रयाते नृप ! पत्तनीयं जेतुं स सोमा किल पौदनस्य ।
करेणुकाविहारी सकलमूर्तिकामां वसुन्धरामेष तत पंककार्दमम् ॥ ५ ॥
नृपद्विपेनाकामुकस्य हिमाद्रः वर्णाय हठेन नितम्बवत्याः ।
संकल्पयानेन निसर्गलोलत्याद्ध्वनिरस्य हृदि मन्मथेन ॥ ६ ॥
अनङ्गकाण्डगुणोपपन्नाः तस्याः कुचौ निर्भिन्नकुम्भिकुम्भौ ।
मयोत्सवयोगात् कुचनाटिदाभृद्गजकर्म एव खलु तस्य चित्तम् ॥ ७ ॥
त्वयैव चित्तं मुखचन्द्रबिम्बं तस्याः स कामानलतीव्रतापं ।
शमाय पापेन तथापि तस्य सन्तापिरुद्धामविवृद्धिमासीत् ॥ ८ ॥
स्मृतिर्विबन्धेन वसुन्धरायाः विधाय चेतसि गन्धदानः ।
स तापनिर्मुक्तदाराम्भसमर्मस्य मर्मे मकरध्वजस्य ॥ ९ ॥

---

१ अभिरा मुद्रा यस्य तत् । २ चक्रविरमरच्छुक । ३ विशुद्धनारीसुख रम- यतीति तेन । ४ सुवर्णस्य एव धनुर्यष्टिम्या भवतीति तेन । ५ पूर्णकटोरे । ६ जिर्णा हस्तिनस्या कुम्भौ यान्यौ । ७ यद्यपि शोके चद- संतापसंतापहानये भवति, तथापि कमठपापवशात् संतापवर्धकत्वेन विरहित एव जात इत्यर्थः । ८ पुनः पुनः स्मरणेन ।

मनोरमावर्तिनि नाभिकूपे निपातितं तेन मनस्तदीये ।
पुनर्न कर्मण्युदतिष्ठत स्वे गभीरपातालमिव प्रविष्टम् ॥ १० ॥
निषेधनायेव पुनः प्रवृद्धेः कांचीगुणेनाभिनिबध्यमानः ।
सविस्तरस्तन्मनसाऽणुनाऽपि व्याप्तो मृगाक्ष्या युगपन्नितंबः ॥ ११ ॥
धृत्वा लतांगीं करपल्लवे तामनङ्गमाप्तुमिवाभिवृत्तम् ।
निरुद्धपंचेंद्रियवृत्तिचित्तं तं मूर्च्छयेऽबध्नदिव क्षणेन ॥ १२ ॥
पूर्वापरालोचनकर्मशून्या तथागतस्येव मतिस्तदीया ।
वृहत्समारोपतया कृशांग्याः कुचौऽयलौ सुतरामशोभीत् ॥ १३ ॥
स विह्वलः सम्मदनानलेन किमप्यहल्या जनतासमक्षं ।
नृवीर ! विश्वास्य जनेन सार्धं न्यविक्षतोद्यानमदोषितात्मा ॥ १४ ॥
अतिप्रवृद्धेन मनोभवाग्नेस्तमोष्मणा दुर्विषहेन राजन् ।
अनीयत पाथ्यकतां तदंगे पुनः पुनश्चंदनपंकलेपः ॥ १५ ॥
स्थितोऽपि तस्यामशनैरशोकप्रवालशय्यां स विवृद्धतापः ।
ज्वालामिवाबुद्ध दवानलस्य स्मरातुरस्यास्ति कुतो विवेकः ॥ १६ ॥
स चंदनांभःकणसेकशीतैरावीजितः सत्कदलीद्रुमाणां ।
मुहूर्तमापांडुरगर्भपर्यैर्विषानलस्पृष्ट इवामुमूर्च्छे ॥ १७ ॥
मुहुः समुत्थेंदुकलाविशुद्धां वहन्मृणालीमुरसि स्मरार्तः ।
अभूत् स्वकीयानदंतस्तदानीं दंष्ट्राभिघातकंपदंतकस्य ॥ १८ ॥
आंदोलितोपांतसरस्तरंगो विनर्तकश्चंदनवल्लरीणां ।
विदाहकारी श्वसनोऽपि तस्य को वा प्रियो धर्मपथच्युतस्य ॥ १९ ॥
सुगंधिनीलोत्पलतल्पशायी मुहुर्द्विरेफैरुपरि भ्रमद्भिः ।
धूमायमानस्स इवाभवत् प्रागभिज्वलिष्यन् झषकेतनेन ॥ २० ॥
आसादिताः पल्लवरागभंगं तच्छ्वासतापेन तदीयदुःखं ।
सामीप्ययोगादिव बालचूताः स्वयं विभागागतमन्वभूवन् ॥ २१ ॥

---

१ उदरस्य । २ कटिप्रदेशे । ३ संक्षिपति स्म । ४ जनसमुदायसम्मुखम् ।
५ उष्णताम् । ६ मलयजः । ७ वातः । ८ कामेन । ९ विभागे आगतम् ।

द्वितीयः सर्गः ।

रसायन सिद्धू दृशौ स कामनीयामभिवंशेन यथा विनर्थः ।
नी त्रिवल्लीमिव लालयन्तम् कामो हि कामं समवाप्नोति॥२२॥
नोऽरेषे कल्पहंसवेन पृष्टस्य तस्यै हृदयोपमाय ।
शिरिनितान्तप्रमोर्मिवनंमामवाप्यकान्तां मदनज्वरस्य ॥ २३ ॥
न तल्पते नानुपत्य मार्दीमपांघद्विरिवं कल्पहंसमामा ।
प्रियायमानं सुदेति ! ज्वरातों न कुपनते यथं न वर्मोपमग्नं॥२४॥
प्रतिधिना न भगते न ललिमन् विवर्जिता वर्मोपितापविद्भिः ।
स वरेषप्रमाणद्यानरींद्रो गवां स्पृष्टुमनिच्छति सानुरागा॥२५॥
निःशाय यामे कल्पहंसकस्य यामं तथाकारः सर्वानपेता ।
अपाद्नानां नया नमग्, तथयोनिवं वेतुनिर्गादिनस्य ॥२६॥
कुलोपकारा विकस्त्र नरथी ननानराधारपितापरूपा ।
अपुरु तमोगमनंगदायं नियतो हि ललिमन् विपयं विरूपाः॥२७॥
सर्वोत्तदेवं नमकालमीय ज्वरस्य वे कि गु विनिमनस्य ।
विर्यति या कांति द्विनानि धत्ता प्रतिक्रियां वीरसमादिदांति॥२८॥
स उत्पुरस्य विविनिरवृत्तिदेवा आचवयं याचं गृहागोपनाया ।
द्विपा द्विपय प्रविमुच्यमानो सानुप्रियां कस्मपांगदिरम् ॥ २९. ॥
मनोमयवान्मिय ! विनिलमसन्य ब्रिचाययहानि ज्वरविघमस्य ।
चिरिकिन्मतं धेद समानवासा दीकगुलतान् गुरुमं न येमि॥३०॥
मैनागमाद्रा घरन्तोयमगारूपंव्यर्थापका उने मनोज्ञ ।
मैनोमयान्मिनगृहियं मतिमं प्रियाधिकंदय विभर्ति सौख्यम् ॥३१॥
मृगी गृहेनेय घनं जनानां लज्जाभिमानेन मनोऽधिदोते ।
तायन् समागमसमिनि नीयपाती यायय शार्दूल स्यांगलम्मा॥ ३२
धुनोति नूनं जननं द्वितीये घर्मान्तरावासमनिलंघयंतं ।
मृगेन्द्रयं ! न समतं मनोभूः क्षणोऽपि मंगं निजदानसनम्य ॥३

१ स्पृष्ट्वा थ । अप्रान्तया । २ नेत्राभिरामाम् । ३ शोभनदन्ते । ४
... कालोऽपराध । ६ उभयत्रापि स्वहृदया ।

अकारणोद्वेगकरो नराणां त्वया स सौहार्दमिव प्रपन्नः ।
उदासिना नन्दि ! नयान्तिकस्थं यत् सांप्रतं मां प्रति पुण्यधन्या ॥३४॥
भावोद्गतं भावगभीरमित्थं निवेद्य तस्मिन् विरते ननघ्नुः ।
अमात्यतैवं भयकोपमिश्रं रसान्तरं किंचिदिव प्रपन्ना ॥ ३५ ॥
गुणागुणौ योऽयमिना जनस्य दोषानदोषौ च निराकरिष्णुः ।
यदि त्वमुन्मार्गमुपाजिहीर्षयाधिरं ततो नश्यति हंत पंथाः ॥ ३६ ॥
विवेकपीतं विनयश्रियांतं मंगलरम्यं चरितं स्मरस्य ।
स तेन कुर्वीत यशो मलिनं लोकत्रयश्लाघ्यगुणं गुणाढ्यः ॥ ३७ ॥
मनःप्रसंगोऽपि परांगनायां क्षिणोति पुण्यं प्रथमं जनस्य ।
स पुण्यरिक्तामनुयाचमानं कन्यापि मांस्यं लभते किमायं ॥ ३८ ॥
गुणानुलेपान गुभग भविष्योऽलं मर्मिदो निपुणं मानसस्य ।
वैरा परत्रापु कृताभिलाषमीर्ष्यावतीयोऽस्तनि निर्विधेश ॥ ३९ ॥
छिन्नं यदीप्सोरिदमीदृशं मे पुनर्भवो मा चकयः कथंचित् ।
इति स्फुटोक्तिप्रतिषिद्धतस्य नन्दी विमलमतिं कमठोऽभ्यधत्त ॥ ४० ॥
विश्रम्भणो रागवतो ममाद्य मुग्धस्य वाक्यानि न ! निर्गतसालं ।
न शिक्षया ते विनियन्तुमर्हा स्नानविशेषोऽध्वगपादुकस्य ॥ ४१ ॥
मनुर्मनीषं नयनाभिरामा कला च शिक्षा विपुला च लक्ष्मीः ।
अनुरूप सर्वमिदं विरूपं मनोरमाणामथ योषितां वा ॥ ४२ ॥
विचारणं कामनिमग्नचेतः ! त्वा न सोऽगर्भागम्नुगतान्यपामि ।
सत्कन्तु मा नन्दि विहंतुकामं निमार्गनामैव समस्तमपेति ॥ ४३ ॥

इति प्रभूतानुनयस्य तस्य
द्विषात्त संस्थामगमत्सुधाशी ।
स्वजात्यवर्णं प्रकटस्वरूपम्
स्त्रीणां मनः किन्तु कुतोऽप्यगात्मम ॥ ४४ ॥

---

१ [illegible] । २ [illegible] । ३ [illegible] । ४ [illegible] । ५ [illegible] ।

द्वितीयः सर्गः ।

अपि नाम चिरप्रवासमग्न
पुंसोऽभिमुखा भुजपंजरेण ।
न कामिनी संगमयति स्मरार्तां
तत्पापकारा नु न किं करोति ॥ ४५ ॥

रूपं कुले यौवनमाभिजात्यं
मतक्षयमात्र विचारयंति ।
कांचित्क्षितेऽपि स्वरांगनिविष्टाः
कंदर्पदर्पं परिमर्दयंति ॥ ४६ ॥

उपाश्रमापन्न रवेर्दिनान्ते
सर्वांगसन्दापि मयाऽऽत्तपर्धाः ।
स्वरागमाविष्कुर्वति स्वानुरागा
पद्मं न किं कीटमलैर्निर्गुणत्वा ॥ ४७

स्थिरं प्रकाम्या फलदं समूलं
छायोपगम्यं समुपाश्रयंती ।
द्रुमं लता पुष्पवती नु काले
संभोगयोग्यं मधुपाय दत्ते ॥ ४८ ॥

आलामयं योगहतिप्रयातो
व्यापृष्टिहेतुर्धिषयान मुमुक्षो. ।
मुखे पर मम्य दुराचरित्रं
निरीक्ष्यतां देव! महप्यदोषम ॥ ४९ ॥

स यौवनोष्माणमभीतचेता-
स्त्वद्देवयात्रां गणिकाजनस्य ।
वक्षस्थलेनोद्गतहार रहस्य
मर्लीदहार कुचकुंभभारम् ॥ ५० ॥

---

१ रक्षिता । २ बाहुरूपपञ्जरेण । ३ वर० हिरण्यदन्तेर्वा । ४ पक्षे-पु
रजसदृती रजस्वलेत्यर्थ ५ मधु मम पिबनीति सर्वं [illegible] भ्रमराय्
६ मोक्षमिच्छोः । ७ भूपनाम ।

स राजगेहाद् दिवसेषु निर्यन्।
मातंगमारुह्य तमार्गपीनात्।
तथाप्यसंमोद्य नमन् मनुष्या-
नसह्यपीडानकरोदुरात्मा ॥ ५१ ॥

अपश्यदापूरितरंध्रभागं
तथानुकुर्वन् नृप ! राजवीथीं।
इभेंद्रयायी पुरसुंदरीणां
नेत्रोत्पलैः सौधगवाक्षजालम् ॥ ५२ ॥

इतीदृशं गर्हितमन्यदन्यत्
नरेंद्र ! तस्यास्ति बहुप्रकारम्।
अनिर्जितात्मा कुरुते हि नो यत्
तत्सर्वमुर्व्यामथवा प्रदुष्टम् ॥ ५३ ॥

इत्थं यथावत् प्रणिगद्य तस्मि-
न्निच्छाधिकर्मांसनृपप्रसादे।
चरे गते तं मरुभूतिरेवं
प्रजार्यमार्यां गिरमाबभाषे ॥ ५४ ॥

असत्यमेवं न वदंति दंडा-
दसह्यदुःखादनुजीविनस्ते।
संभावना देव ! तथापि वाक्यं
चरस्य तत्संदेहनिर्णयाय ॥ ५५ ॥

विचार्य कुर्यास्त्वमतेऽनुरागं
जनस्य लक्ष्मीः खलु तन्निमित्तात्।
युक्तो विशुद्धिं च परां विधत्ते
द्वाराणि पापस्य हि या पिधत्ते ॥ ५६ ॥

---

१ असत्कूल। २ अत्यधिकस्तमो नृपस्य प्रसादो येन। ३ मिथ्योक्तिम्।

अधिष्ठितस्त्वमपि मंत्रिरूपे
करोति चेदिंद्रियबंधुवर्गः ।
धर्मं प्रपत्तुंर्धिगमाप्तसंधिः
किमंग ! भृत्यो विषये परोक्षे ॥ ५७ ॥
अतः स्वयं तस्य विचिन्त्य दोषं
यतस्व नीत्या नृप ! निगृहीतुं ।
जनस्य मन्युज्वलनावलीढा
तथाऽन्यथा म्लायति कीर्तिवल्ली ॥ ५८ ॥
तदेति राजा जनतासमक्षं
विचिन्त्यताऽज्ञापि तथा स कूर्मः ।
धरांधरागंपदमाप्तरूपे
यथा व्यपनीत यशो जनस्य ॥ ५९ ॥
अनल्पको राजसमीपवर्ती
खराधिरूढं कमठं नगर्याः ।
निर्वासयामास स लोकपालं
गृहीतपत्रं परिभूय पापम् ॥ ६० ॥
असत्प्रवृत्तेऽपि विप्रयोग-
स्तस्याचिरं बंधुजनप्रियस्य ।
चकार दुःखं सचिवस्य दोषात्
मनाकि न प्रेम महानुभावः ॥ ६१ ॥
चित्ते गते ज्येष्ठवियोगदुःख—
भाराक्षमत्वादिव विप्रमोषं ।
चिराय तस्य प्रतिसुप्रबुद्ध—
नं भोगवांच्छां दधुरिंद्रियार्थाः ॥ ६२ ॥

---

१ क्रोधाभिसंस्पृष्टा । २ मरुभूतिपत्नीपाणिग्रहणादि । ३ दुश्चरित्रस्य । ४ मरुभूतेः ।

कुर्वन् प्रयत्नेन स पांसुदंशं
निरीक्षमाणो कमठानुयोगं ।
अकम्पनीयं पवनप्रसंगे
देवेन नीतेन धनेश्वरेण ॥ ६३ ॥

अमात्य ! जानामि तवाप्रगम्य
पृष्ठाभिमुख्यागमना गतस्य ।
यद्यस्ति ते कौतुकमत्र गन्तुं
महिमारं पश्य तमाऽप्युपेहि ॥ ६४ ॥

इतोऽस्ति देशे द्वययोजनान्ते
भूभृत् स भृगाचलनामधेयः ।
अत्युन्नितं यस्य सहस्रधामा
कष्टादतिक्रामति शृंगकूटम् ॥ ६५ ॥

आमुक्तनिष्यन्दमनोज्ञहारा
भुजालताग्रस्थितनागमुद्राः ।
दृहन्मिनंद्याः सविलासभारा
मनोरमा यत्र विभाति भित्तीः ॥ ६६ ॥

घनद्रुमान्निर्झरशुभ्रतोयै—
र्घर्मेऽपि यो वर्धयति प्रकामम् ।
पादाश्रितानामभिरक्षणं यत्
तदेव कृत्यं नु महोन्नतीनाम् ॥ ६७ ॥

यः पार्श्वभागप्रविलंबितेन
विचित्रजीमूतकुथेन गर्वी ।

---

१ मार्गं पश्यन्नित्यर्थः । २ कमठप्रवर्तिनम् । ३ सूर्यः । ४ आमुक्ता निष्यंदा निर्झरा एव मनोहरा हारा यासाम् । ५ भुजा एव लतास्तासामग्रे स्थिता नागा एव मुद्रा यासाम् । ६ बृहत्पाषाणाः । ७ ग्रीष्मेऽपि । ८ विचित्रमेघ एवास्तरणविशेषस्तेन ।

नवरमालापरीर्णानयूथां
रयधन्मन्वेति गजाधिराजम् ॥ ६८ ॥

भीमो भृशं भानुकराभिमर्शान्
यः सूर्यकान्तैर्ज्वलितैर्मनोज्ञः ।
चंद्रांशुपातद्रुतचंद्रकांतैः
संस्पर्शजा दोषगुणा भवंति ॥ ६९ ॥

विलोचनानीव सरांसि यस्मिन्
विघट्टनाटनमनोहराणि ।
नीलोत्पलश्रीरमणीयनाना—
कारांदरण्यायनिमंति संति ॥ ७० ॥

क्रीडंति यत्रेषु मद त्रियामि—
नेमध्यगा यस्य गुरुप्रमोदाः ।
भृंगीगणोत्कीर्णदलप्रसून—
पर्याप्तकल्पेषु लतागृहेषु ॥ ७१ ॥

गुहामुखैर्गंहरगर्भगूढं
कंठीरवध्वानसुभीमनादैः ।
यः पावने यत्मनि वर्तमानो
मातंगयूथं कुरुते दविष्ठम् ॥ ७२ ॥

निहन्यवन्यैर्भयविग्रापमाजा
निर्मूलितानेकघनद्रुमेण ।
मार्गेण यस्मिन् दाघेर- दायुनां
निरुध्यते कायमहत्त्वयोगः ॥ ७३ ॥

---

१ हुठितमीनमनोहराणि । २ सानुषु । ३ भ्रमरीगमूहक्षोदेन गलति यानि प्रसूनानि तैः पर्याप्तानि तल्पानि येषु । ४ कदाचमप्युषितम् । ५ दूरवान्दस्येठ प्रस्थानस्य हृपम् । ६ निहन्यवनभवगजदलगहिनेन । ७ उत्पाटिता अनेक वनद्रुमा यस्य तेन । ८ मृदयाणानाम् ।

तस्योपकण्ठे वनराजिरम्या
तपोभृतामाश्रमभूमिरस्ति ।
या प्रत्यहं व्योमनि होमधूमै-
र्नवांशुकाढ्यश्रियमातनोति ॥ ७४ ॥

कुम्भोपमैर्यैः कलशैस्त्रिसंध्यं
पयः क्षरन्तो यतिमुग्धकन्याः ।
स्वयमप्यगाहदयगुणेन पदगा
लताद्रुमं यत्र विवर्धयन्ति ॥ ७५ ॥

शाखामृगा यत्र गृहीतशिक्षा
नैसर्गिकं चापलमुत्सृजन्तः ।
कुर्वन्ति आनीय निशागदण्डा
तपोभृतामंधकदल्लपर्णीः ॥ ७६ ॥

[illegible] पद्मा—
दर्शनाय वंशस्थागिलानम् ।
यत्रानुयातः शुकशारिकाणा—
माकर्णनं कर्मस्वायनर्थाः ॥ ७७ ॥

उदाधरं श्रीर्यमुनेव नम्यां
नर्मस्थलं मस्य [illegible] ।
[illegible]
प्राप्ता नगस्थानगमप्रदीर्घ ॥ ७८ ॥

[illegible] स्मुर्भान्त्र श्वेता निमांन-
मुग्ध्य वाहू न हि यागभेषु ।
[illegible]-
[illegible] निर्गति मार्कंडंगी ॥ ७९ ॥

---

१ [illegible] । २ [illegible] । ३ [illegible] ।

निधेय पाणीं कमठस्य तस्मिन्
गृहीतसत्यार्थमिति क्रियाते ।
अकल्पयत्तं सचिवेन गत्वा
दुर्मोदपाशात्स्खलितेन राज्ञा ॥ ८० ॥

प्रेमानुबंधः स्वजने जनानां
वलिन् प्रभो ! दुष्फलात् कुतोऽपि ।
परं प्रकृत्येव गुणप्रकर्षाद्
दोषाणु न प्रव्ययते कदाऽपि ॥ ८१ ॥

अतो वियोगं न सहे दुरंतं
कृतागसोऽपि स्वयमग्रजस्य ।
पुनः करिष्यामि तथाविधं तं
प्रमाणतां देव ! तथैव भूयः ॥ ८२ ॥

भृगाद्रितुंगो न तयोर्वियोगो
भूयान्निकारश्च न पीदनेऽस्मिन् ।
बुद्धिं गुणेषु प्रदिशेति तस्य
प्रमार्ष्टि दोषं च पुरानिषिद्धः ॥ ८३ ॥

इति ब्रुवंतं तमुवाच राजा
शुचिस्मिताह्लासितदंतकांत्या ।
कुर्वन् पुरस्तात् गगनप्रदेशं
चंद्रातपेनेव दिवाऽपि लिप्तम् ॥ ८४ ॥

अवश्यकर्तव्यमिदं हि पुंसि
यत् सर्वथा साधुजनप्रसंगः ।
विवेकसिद्धेः स भवत्युपायः
श्रेयस्करी सा च भवद्वयेऽपि ॥ ८५ ॥

---

१ मते । २ अपराधिनोऽपि । ३ चंद्रिकया । ४ दिवसेऽपि । ५

अहं तथाऽपि प्रतिबोधनीयो
  बाध्येऽपि दोषे सति निर्विवेकः।
विवेकनिष्णातमना मनीषी
  किमंग! याचेषु करोति तृष्णाम् ॥ ८६ ॥

कुलेन कुर्वन्नपि भेदमात्रं
  दास्यां नियोगस्य निरासितुम्।
छाया निकारप्रतिकारपिनेन
  प्राणप्रयाणेष्व पुनः प्रयोगः ॥ ८७ ॥

अनर्थमन्यप्रकृति [illegible]
  [illegible]।
[illegible] कण्ठालिङ्गनमन्यथं वा
  [illegible] कंठाभरणं भुजंगम् ॥ ८८ ॥

अमात्य कामं नृपनेत्रमात्र
  प्रागागमनं गृहमध्यरात्रे।
[illegible] न निर्गताम
  क्रोधादृतान यदि वा [illegible] ॥ ८९ ॥

[illegible]
  [illegible]।
[illegible]
  [illegible] ॥ ९० ॥

[illegible]
  [illegible]।
[illegible]
  [illegible] ॥ ९१ ॥

[illegible]

जिनेन्द्रपर्यायमयस्य पुण्यं
वत्स्यामि ! कालेन समार्जयामः ।
चिराय दैवेन निरूपितोऽस्मि
नेत्राभिरम्यो रचनाविशेषः ॥ १२ ॥

इति प्रियामालपतैव राज्ञा
घर मुहूर्तात् ददृशे स मेघः ।
प्रचण्डपातोद्धतदण्डपात-
व्यापादितोऽखण्डशरीरपिण्डः ॥ १३ ॥

तथाम्बुदस्य प्रकृतिं स पश्यं—
धर्मान्तरायाणि चिरन्तनेनाः ।
अनेन युद्धं चिरयद्धियाणा—
महाऽघनत्वं तुलया घनेन ॥ १४ ॥

वपुः स्वभावाशुचि भंगशीलं
निदानमेकं खलु दुष्कृतेः ।
तदर्थमात्मानयशोधमूढा
अनात्मनीनं रचयन्ति यत्नम् ॥ १५ ॥

शिवांगसंबंधिनि मादृशस्मिन्
देहे दृढप्रेम जनो नियभन् ।
गृहीतनिर्मुक्तचिरंतनानां
तेषां पुनर्विस्मरतीति चित्रम् ॥ १६ ॥

श्रयपथदारमशौचपात्रम्
क्षेत्रं वपुर्व्याधिसरीसृपाणाम् ।

१ कारयाम । २ दर्शिन । ३ प्रबलपवन एवोद्दरदंडस्य पातेन
नाशितोऽखण्डशरीरपिंडो यस्य स । ४ आत्मविवेकमूर्खाः । ५ द्वयोर्क्षयाणां
दिनानां संबंधो यस्य तस्मिन् । ६ पूर्वं गृहीता पश्चान्निर्मुक्ता ये, चिरंतन
पूर्वजन्मसंबंधिनस्तेषां । ७ रोगसर्पाणाम् ।

[illegible]
[illegible] ॥ ९७ ॥

[illegible]
[illegible] ॥ ९८ ॥

[illegible]
[illegible] ॥ ९९ ॥

[illegible]
[illegible] ॥ १०० ॥

[illegible]
[illegible] ॥ १०१ ॥

[illegible]
[illegible] ॥ १०२ ॥

[illegible]
[illegible] ॥ १०३ ॥

[illegible]

विचित्रमत्तसंगचलांगलेशाः
सपुष्पमाला मधुपप्रणादैः ।
लताः स्वयं दर्शितलास्यलीला—
स्तस्येव गायंति तपःप्रभावम् ॥ १०४ ॥

मुनेस्तोपस्य घनप्रवेशे
निर्यदितापघनतोयपूरा ।
ध्रुवं नमस्यंःपदतोय दर्पात्
दधंजन्ति रागं नयपादपेषु ॥ १०५ ॥

तत्कालिकश्रीप्रभवं मुनींद्रो-
र्गुणं प्रतापंन इव द्रुमाणाम् ।
आघ्रांतुरम्यादधिपुष्पदर्पाः
कुर्वंति लीलावलमन्यपुष्पां. ॥ १०६ ॥

पतिप्रमायापवनेन धूना
यमंगलस्मानयगंगमेन ।
मंदारमदर्पा इव देव ! सर्वे
दाक्षांहमन्तु स्वलेभारशिखा. ॥ १०७ ॥

नमोमुखलस्य गुणप्रकाशात्
महीश ! विस्तारयतो भियेव ।
अन्वेति नन्धाशसंमकपाहयं
नमलमालद्रुमसंनिवेशम् ॥ १०८ ॥

नयन् सलीलं सरसीऽधुधिदून्
पाथानिधाधमंकटाक्षगंध. ।
यदान्य ! धन्यद्रुमपुष्पवृंदो
मदो मयन् न गुरुमभ्युदेति ॥ १०९ ॥

---

१ भ्रमरवं । २ कोकिला । ३ दाक्षासुदघन कुमलास्तेषां भारेण छिन्ना । ४ गजकुम्भर्दतगध ।

विपाकमाधुर्यभृतो मनोज्ञ-
कमास्समासातिशयावरुद्धाः ।
तपोभृतो बिभ्रति सौकुमार्यं
जनार्य ! वाचो नववल्लयश्च ॥ ११० ॥

नवोद्गमाः स्थावरजंगमानां
प्रमोदपात्रा यतिसंगमेन ।
रजस्सुगंधि भ्रमरावलीढं
क्षरंति नागा यदि वा मदांभः ॥ १११ ॥

क्षमोर्यपन्ना अनंतीरनूढा
दृढं वहंतस्सुमनस्समृद्धाः ।
मधुव्रतानां प्रियमुन्नयंति
घनद्रुमा देव ! यतेर्गुणाश्च ॥ ११२ ॥

पिशंगितांगी परितो रजोभिः
पुनांगनव्यप्रसवाभिवांतैः ।
विभाति साधुप्रणयोत्सवेन
मही महीनाथ ! हिरण्मयीव ॥ ११३ ॥

तपोनियोगाद् यमिनो वनांते
पूगद्रुमान् दर्शयतः फलानि ।
निष्प्यंति वैदग्ध्या इव नागवल्ल्यो
नखक्षतावर्जितपत्रभंगाः ॥ ११४ ॥

---

१ मनोहरा रचना शैली यासां । उभयत्रापि समम् । २ समासेनातिशयेनावरुद्धाः । अन्यत्र–समास. संक्षेप । ३ अचला । ४ पृथ्वी, क्षांतिश्च । ५ वक्री, विरुद्धमानता च । ६ पुष्पाणि, सुष्ठु चेतश्च । ७ भ्रमराणां, मद्यव्रतिनां च । ८ सुवर्णमयीव ।

स्तेभ्योऽधिरामपरायणस्य
स्थितः कर्मणि नृप ! विगुणाः ।
प्रयाति संभूय यमद्रुमाणां
छायासु मर्त्योऽमृतपानितासु ॥ ११५ ॥

सौम्यत्वमनेन निराय वाचम्
स्थितापिबंदार्थसमर्थकामम् ।
प्रासादशौर्या नृपतिमंदिरे
वाचयन्नं धैर्यमपास्यमंदरम् ॥ ११६ ॥

पदानि व्याप्तानितलस्य पश्यन्
सम्भ्रमः सांजलिर्मौलिनिबद्धः ।
ननाम मार्गे मुनिपुंगवाय
गुणो हि मुख्यो विनयः प्रभूणाम् ॥ ११७ ॥

सौम्यंसवल्गानि विभूषणानि
स्थायं स्वगाधादपनाशितानि ।
अपश्यदुर्वीर्धनपाय राजा
त्यागोत्सवं मानयता हि सुधिः ॥ ११८ ॥

स योधनाध्यायनपात्रमोघः
गुंडातमाचरन् महार्घमोदम् ।
प्रस्थानमंगीलयपूर्वयानं
बद्धैः पुरोधानयनं जगाम ॥ ११९ ॥

ललितपत्रोद्धमचारुशाखा—
स्तमांचितत्स्फाटिकभूमिनम्रम् ।
विद्यामृतस्वादविमुह्यमान
हर्षप्रकर्षादपि माऽध्यपणम् ॥ १२० ॥

---

१ मनस्विनवैराग्यसमर्थकम्

धर्मस्य सर्गमिव देहमिव क्षमाया
मोहस्य भंगमिव संघमिव मतानाम् ।
हृद्यं प्रकाशमिव तत्त्वधियो दयाया
मूर्तप्रयोगमिव सार्थमिवागमानाम् ॥ १२१ ॥

यतिपतिमवलोक्यानेकपाद् दूरदेशे
क्षितिपतिरवतीर्णस्तूर्णमुद्वेलहर्षः ।
सविनयमुपगम्य क्ष्मातलघ्रातचूडा-
मणिरगणितलक्ष्मीः साधुसंघं ववंदे ॥ १२२ ॥

आनीतं स्वनियोगयन्त्रनपरैः कर्मांतिकैस्तत्क्षणा-
दाक्षिण्यामलतेजसा यमवतामाज्ञात-मध्यासनम् ।
प्रौढाहःश्रमभंजननिर्भरतया पृष्टं सुपरिस्थिता
पपृच्छ मुनिनायकः क्षितिभुजा व्याकृतमुद्वर्धिया ॥ १२३ ॥

इति श्रीवादिराजसूरिविरचिते श्रीपार्श्वजिनेश्वरचरिते
महाकाव्ये स्वयंप्रभागमनं नाम
द्वितीयः सर्गः ।

तृतीयः सर्गः

भवतापनिदाघपीडितं
भवता नाथ मनश्चिराय नः।
अमृतद्युतिनेव नेत्रयोः
परिलब्धेन भृशं प्रमोदते ॥ १ ॥

धुतसंतमसं रजो वमन्
सविकाशद्युति सत्पथोन्मुखम्।
तव संनिधिनाऽभवन्नृणां
हृदयं पद्ममिवाहिमद्युतेः ॥ २ ॥

विषयव्यतिषंगनिस्पृहं
चरितं ते दुरितप्रमार्जनम्।
अपरेऽनवसानपद्धतेः
सहसाह्लादमुपैति मानवः ॥ ३ ॥

स्वपराधनिबर्हणं वला-
दसिधाराक्रमणोपमक्रमम्।
विरलाः खलु ते भवादृशा
नियमं निर्मलमुद्वहंति ये ॥ ४ ॥

मलिनानवलोकते जनो
जगदुद्योतकृतो भवद्गुणान्।
अविवेकतमा मलीमसान्
रविरश्मीनिव लाञ्छनद्विजः ॥ ५ ॥

१ चंद्रमसा। २ सूर्यस्य। ३ आनन्। ४ खड्गधारो परिगमनमिव कठि...
नित्यं। ५ राहु।

अथ कुंजरशैलनिर्झरो—
    च्चलदच्छांबुविवर्द्धितद्रुमम् ।
मलये नृवर ! प्रतीयता—
    मनुवेगाद्यति महर्षिवनम् ॥ १८ ॥

जटिलाः परिधीतवल्कलाः
    स्थिरशाखाश्चलदंतपंक्तयः ।
तरवः सवयोधिगृद्धयो
    विदिता यत्र तपोभृतोऽथवा ॥ १९ ॥

निजचापलतापरित्यजना
    भयजीवापमरच्छिदलीमुखेगाः ।
कुसुमन्नयकल्पशोद्धता
    गणभुवां इव यत्र शारिनः ॥ २० ॥

अतिमार्गनिसर्गसौरभं
    कलिमग्नं ननु यत्र चंदनम् ।
अनुशोचति निश्चमस्थली
    न गुणास्य गुणो न तादृशः ॥ २१ ॥

सुषिरस्थलकुंभसंभव-
    ध्वनिमिषंकृयताल्मलीमुखैः ।
स्वपरेव विरुयते मरु-
    च्चलशाखाग्रनिकंटकादृतैः ॥ २२ ॥

वनदेवनिसर्गानुरागिणा
    विनता यद्विगमपष्ठराशिरम् ।
कुसुमेषु नदीयसौरभं
    द्विगुणं बिभ्रति भृंगपेटलम् ॥ २३ ॥

---

१ [illegible] । [illegible] । २ [illegible] । ३ [illegible] । [illegible] ।

यदनेकविधरत्नोद्भुतं—
निचितं भूरिजगद्गुणावृतैः ।
भुवितस्यपरस्यादिनार्लीमुवा
निचितार्ह न परे गुणच्युताः ॥ २४ ॥

सुरभिर्नयपरायालसौ
नयया यद्भलयदनायकिः ।
परिरम्यनयेप भोगिभि—
र्भयमार्गः समंटस्तु मन्यते ॥ २५ ॥

नयपाणगुनाः सुजातयो
विकटाशा विकलाः पलाशिनः ।
प्रतिबिम्बति नस्पयोधनि
नग्यो यत्र न धन्यमानयाः ॥ २६ ॥

विमनोति षडंमैव भृशं
प्रमदं यस्य सदा मता लता ।
सुरभिप्रमयाऽथ दंतिना—
मपि भूनाथ ! मदान्तताल्ता ॥ २७ ॥

तिलकांकितगंडमित्तयो
मतरन्यासवरप्रहारिणा ।
हरिणाऽपमरान्यधिष्ठिताः
पृथुदाला इव यत्र कुंजराः ॥ २८ ॥

समदद्विरदर्निपातिना—
स्तरवो यस्य निरुंधते पथः ।
मरेला ननु मार्गविग्रय-
स्थितिमभ्रुचितं विधीयते ॥ २९ ॥

... भिदेत । ३ मरलद्रुमा ।

निशि यत्र भुजंगमः स्फुरन्
    मणये तत्किरणोपदर्शितः ।
शबरैर्विचरद्भिरुज्झितं
    वनिता हि कचिद्रंग ! भूत्यके ॥ ३० ॥

ज्वलितेषु वनान्तशायिभि
    र्निशि यस्मिन् दहनेषु शंसनैः ।
प्रतिमुच्य नगोत्थं गतं
    समयोऽहसमदंति यन्धरत्नः ॥ ३१ ॥

विपुलागमनागमगहरं
    प्रतिदारवदिग्गुहाधिया द्विपः ।
भुजमर्गेति यत्र पंचता
    ननु मिथ्याग्रमनर्थकारणम् ॥ ३२ ॥

    [illegible] यत्र
वसुधाना [illegible] ।
    [illegible]
    न हि वर्ण्येषु गुणज्ञता गुणः ॥ ३३ ॥

[illegible]
    [illegible] विवर्णा ।
[illegible]
    [illegible] ॥ ३४ ॥

[illegible]
    [illegible] ।
[illegible]
    [illegible] ॥ ३५ ॥

[illegible]

त्वरयेव सवेगनिम्नगा
चलितुं भर्तृसमीपमुद्यता ।
तरलांशुतरंगपालिभिः
स्फुरती तीरलताः सखीरिव ॥ ३६ ॥

अभितस्तनमंशु महती
मदनिम्नांसकषायितोदरम् ।
प्रतिपूर्य पदस्यमारुतं
विषमा वेगवती च वर्धरी ॥ ३७ ॥ कुलकम् ।

शुभलक्षणसमूहसंभृतः
समभूत् तव महागजो गजः ।
प्रथितः पृथिवीतले भृशं
पृथिवीघोष इति प्रभाषितः ॥ ३८ ॥

सविभागतरीणभागपि
प्रथमप्रमनंगतां गता ।
महती सुरमंजुरक्षमौ-
रमयत्यस्य यदाऽपि वर्वरी ॥ ३९ ॥

मदभूतिरपास्य जीवितं
मनसासेन विवेकमूढधीः ।
उदिते स तयोर्धनान्तरे
पथिघोषाह्वयनंदनोऽजनि ॥ ४० ॥

चटुपाटलपुष्करोदर-
स विरिंचन्निजचिंकलीलया ।
पितरौ सुतरामममुदत्
सजलस्निग्धघनाघनच्छविः ॥ ४१ ॥

---

१ ऐरावतस्य । २ ललिततनामिकाया लीलया ।

यदुना किमपि प्रयुष्यता
स पितुः पौतनयास्मर्भागमाः ।
गिरिराजसमीपवासिनी—
महतद् गंडशिलोषयधियम् ॥ ४२॥

कलमेन मदोद्धमत्कटाः
स्वयमुज्झितविषाणकोटिना ।
अभवन् मनियोम्बुमभ्रमाः
करिणक्मेण कमालनेजमा ॥ ४३ ॥

अभुनाजनने मयासिने
वपति प्राप्य स नृपनापनाम ।
अनुना विपिनं विभूषयन्
गिरिणेव विपरनामुपेयुषा ॥ ४४ ॥

वर्णाद्यममणोऽपयश्रमः
स्फुटमण्डितमसीपिपिल्यया ।
न शिखीनिर्भमाऽवगाहते
स हि मार्तंडमयो भरिभ्रमम् ॥ ४५ ॥

दर्पितांमुखमा मुनस्माद्
मनसःपुण्यगणमुपाहन ।
अगनार्णविपेंडदनिम
प्रशमपेंत मनाग्विपाणिनाम ॥ ४६ ॥

स्मयमस्यमदार्कोर्वितं
मनोदासनगुण्य गतमय ।
अनुगर्मामिव वर्धितं
स मुनौ संचारिति न सर्वव्यान्तित ॥ ४७ ॥

१ कट । • इस्म पुस्तके ।

तृतीयः सर्गः ।

प्रतियाति वनांतचारी—
कुसुमामोदिनि मंदमारुते ।
स नदीपुलिनेऽभिसंश्रयो
निशि निद्रासुखसिद्धिमृच्छति ॥ ४८ ॥

अनुसृत्य पथेन नापरैः
कुपितैराश्रमतो बहिः कृतः ।
स मठोऽपि किरातेशानां
निजपैशाचवसतीमगच्छत ॥ ४९ ॥

मरणे कृपनारिमार्यकं—
निहतां गोमरणे स लुब्धकैः ।
अनुमितिरमुष्य प्रियं—
रपि दुष्कर्मरतो न बंधय· ॥ ५० ॥

अजनिष्ट स पापचेष्टितो—
मृनुम्मुच्य शाक्यप्रियायने ।
कुकुपाकुपर्णी पुराकृतं
मनु काले नियमेन पच्यते ॥ ५१ ॥

पतिपुत्रवियोगदुःखिता
परिहृत्य धर्ममनुचरी ।
स्वकर्मविपाकदोषतो
विपिने तत्र बभूव मर्कटी ॥ ५२ ॥

नृप ! तव कषायरंजितं
प्रविधेयं विदुषा निजं मनः ।
रिपुरस्ति कषायसंनिभो
न परस्संततदुःखलंभनः ॥ ५३ ॥

---

१ नदीतटाश्रित· । २ प्राप्नोति । ३ शबरपत्नी । ४ वानरी । ५ ...
...री ।

अविरम्य यथेष्टमाचर—
न्नुपचित्याशुभकर्मपुद्गलान् ।
परिपक्करसाननुपालिह—
न्ननु शेते भृशदुःखितो जनः ॥ ५५ ॥

विनियम्य मनो जिनेश्वरे
विदधत् साधुसमाधिभावनाम् ।
शुभतां नय पंचपञ्चणः
परिणामान्नृप ! बंधयादिनः ॥ ५६ ॥

इति तस्य निशम्य शंसितं
मनमुन्यस्य मुखोद्गतं वचः ।
प्रभुरभ्यमनायत क्षिते—
र्भागमे शीघ्रमना मदभ्रमात् ॥ ५६ ॥

अथ निश्चयसौख्यकारणं
प्रतिबोध्य समवाप्यया धिया ।
विषयोपनिपातसंभयाः
प्रतिबद्धं प्रमयो न भुक्तयः ॥ ५७ ॥

अभिषिच्य नरेन्द्रमात्मन—
स्तनयं राज्यधुरे नराधिपः ।
स नरोत्तमसहितः तथा
विधि नत्वैव मुनेरनुज्ञया ॥ ५८ ॥

परिहृत्य बहिर्विभूषणं
मणिहारांगदकुंडलादिकं ।
प्रणतस्तमयं पुनर्दधे
स वरं मुक्तिभूविभूषणम् ॥ ५९ ॥

---

१ मनुज । २ वर्दित । ३ जिनेश्वरे भक्तिमान् भव ।

तृतीयः सर्गः ।

अधिगम्य पुनर्विनिर्णयं
स्वयमंगेषु स तीव्रसंयमः ।
गुणपात्रममुं मुमुक्षवः
स्वधिज्ञानमयापदद्भुतम् ॥ ६० ॥

शिरसा नतया नमस्कर-
स्वधिज्ञानमयेन चक्षुषा ।
अयमोघमपश्यदायुषः
स निजं द्वादशवर्षसंस्थितम् ॥ ६१ ॥

परिहृत्य गुणी गणान्वयं
विदधानः पुनरात्मसंस्थितां ।
जिनचैत्यगृहान् विवंदिषुः
सह सार्थेन ययौ दयानिधिः ॥ ६२ ॥

शिविरे वणिजां निशामिते
स्वनि सक्रियमयमलंकृतयनम् ।
स्वमेया समयानिर्भीतिमान्
क्वचिदासिष्ट शिलातले वशी ॥ ६३ ॥

विनयावनताननाम्बुजः
शशिगुप्तप्रमुखान् वणिग्वरान् ।
मलकर्दममर्दनक्षमा—
मदिशत् धर्मकथां यथागमम् ॥ ६४ ॥

मरुभूतिचरः करी तदा
पथि घोषो मदभेदभीषणः ।
जनघोषनिपीडितश्रवाः
कृतकोपः शिबिरान्तकं ययौ ॥ ६५ ॥

त्वरया गिरिराजसंनिभः
स निवेशे वणिजां समभ्रमत् ।
क्षुभिताऽर्णवनोपदुःस्थतां
कृतमीनिर्जनसंहतिर्दधौ ॥ ६६ ॥

भयनुन्नतया समुच्चरन्
ककुभं जनसाध्वनिर्ययौ ।
वसुधोद्वहनाय दीक्षितान्
स्वयमाक्रष्टुमिवाष्टदिग्गजान् ॥ ६७ ॥

अशमी समेयार्तिनो वपुः
कुपितस्य प्रययन्निव द्विपः ।
शिबिरं निजघान वर्मभरः
करदंतप्रमुखैर्निजायुधैः ॥ ६८ ॥

मनुजं मनुजेन गां गवा
हयमश्वेन लुठन् स निष्ठुरम् ।
अवधीद्द्वयवो निजायुधं
ननु तत्तस्य वधाय साधनम् ॥ ६९ ॥

सुभटस्य समुत्क्षिपन् वपु-
र्निहितस्य स्वकरेण सत्पथे ।
इयतीति पराक्रमोन्नति-
र्गुणवद्वयः स्वयमब्रवीदिव ॥ ७० ॥

नभसि प्रहिता भरावली
द्विरदंतस्य करेण सक्षता ।
रुधिरेण सिषेच भूयसा
निजमन्युप्रचयोपमाभृता॥ ७१ ॥

---

१ समस्य । २ मसृणशील. । ३ सक्रोधसमुदयतुल्येन ।

अवलंब्य करेण पादयोः
क्षितिपृष्ठे रदिना निपीडितम् ।
इतरथा विभिदे नृणां शिरो
न निकारार्तिसहोत्तमांगता ॥ ७२ ॥

अभजन् गजदंतशालिता—
स्फुरणाः शोणितशोणमूर्तयः ।
शशिकोटिविशारितोत्पलो
नवसंध्याजलदस्य विभ्रमम् ॥ ७३ ॥

विनिहत्य रुषा तनूभृतां
प्रविकीर्णेषु शिरस्सु दंतिना ।
ककुदिग्मुखता स्वयं दधे
सभियेव प्रपलायितुं भुवा ॥ ७४ ॥

इति भूमिविदायकोर्यथं
द्विरदे तन्वति सार्थवासिनाम् ।
रुधिरप्रवहा तरंगिणी
घनमूलाद्युदपादि भूयसी ॥ ७५ ॥

मदसौरभलोभविभ्रम—
भ्रमरालीकलदीर्घसंहलम् ।
निजविघ्नकर्कीर्तनोपमं
स विधुन्वन विपरीतेधेरकः ॥ ७६ ॥

स हि तांबकगलनिर्गमे
नृकबंधं परियासिताकृतिम् ।
प्रविभृत्य करेण विभ्रम
न्नुपतस्थौ यतिपुंगवं द्विपः ॥ ७७ ॥

...शरीरा । २ चंद्रकिरणविस्फारिततेजस । ३ मिथ्याज्ञानि...

मुनिराजविलोकनक्षण—
प्रतिबुद्धेतरजन्मसंस्क्रियः ।
नमयुद्ध स पोदनाधिपं
मरुभूतिं स्वमपि द्विपाधिपः ॥ ७८ ॥

प्रतिबुद्धमना मयस्थितौ
स विनिन्दन्निजकर्म निर्मदः ।
प्रणनाम मुनीन्द्रपादयो—
र्गुणलोकोद्गतबाष्पलोचनः ॥ ७९ ॥

गुणुभीतिनिष्कलापिमा जनाः
पुनरस्येव मायालयोपिनः ।
अर्पयिरमुनीन्द्रसंनिधौ
मुनिरनरपुरस्थैव विस्मयम् ॥ ८० ॥

अथवि प्रणिधाय संयमी
मरुभूतिं प्रतिपाद्य तं गजम् ।
कृपया हितकर्मलाभाय
प्रतिमां धाय्यमयान्विदीदृशीम् ॥ ८१ ॥

कृशान्त मम मद्र किं पुन-
मार्गति स्वर्गाभिभद्र ' पीडनं ।
मनिजकल्पमहं न भूपति-
र्मनु बन्धनांय इमौ भिष प्रियैः ॥ ८२ ॥

अनुरागवतीदृशौ मनाव
ममममानाममृतस्य वरुणः ।
परितं मम मेघ वर्मणा
मृमङ्गलेदमपर्णिणे दशा ॥ ८३ ॥

इतर्णित्वरणम मनार्थ
क्लिन्दितं सम्यग्गमानेनं वचः ।

गुरुपंपुजनोपदर्शितं
कथमुल्लंघ्यमतो हितैषिणां ॥ ८४ ॥

मदमुग्धमिदं क जन्म ते
क पुनर्मस्विपदं महोदयम् ।
सुघटाघुटते हि दुर्घटं
ननु कर्मोलयबोधबृंहितम् ॥ ८५ ॥

अयधेयमिदं ततस्त्वया
जिनधर्मास्पदं न जन्मिनाम् ।
भयदुःखनिबर्हणक्षमं
सुखयत्नोपनतं निरूप्यते ॥ ८६ ॥

सुखमिच्छुरुपायहेतुंच
जिनतत्त्वागमिधेययन्तुपु ।
भयसि त्वमनेन कर्मणा
गज ! सम्यक्त्वसमृद्धमानम. ॥ ८७ ॥

मलपंचकवर्जितद्युतिं
दृढसम्यक्त्वमगं महागुणम् ।
गजरत्न ! जगत्रयीनिखा—
मणिता ते दधतो भविष्यति ॥ ८८ ॥

जिनपुंगवपादपद्मयो
स्तनु भक्तिं शतमन्युमान्ययोः ।
दुरितद्रुमपंक्तिपाटने
भवत. सैव परस्वधायते ॥ ८९ ॥

कुरु कुंजर ! मानसे रतिं
दृढसम्यक्त्वमपाप्रसाजिते ।

---

१ पंचातीचाररहितम् । २ दृढ ।

स्यमणुव्रतपद्मसद्मनि
प्रियपुण्यांशु निगाह्य पीयताम् ॥ १० ॥

अहि कौसमसागकारणं
अहि धौंडागरमं मरोसतिम् ।
[illegible] ' यहीहि [illegible]
[illegible] न अहाहि मैहिमिः ॥ ११ ॥

इति [illegible]
[illegible] पुरो [illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ १२ ॥

[illegible]
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ १३ ॥

[illegible]
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ १४ ॥

[illegible]
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ १५ ॥

[illegible]
[illegible] ।

[illegible]

कमलोदरगर्भसंगतं
विदधे साधु स मध्यपुंजरः ॥ ९६ ॥
सुधितोऽपि कृपागुणान्वयान्
स्वयमप्यिद्वयमद्भुमांकुरः ।
दुरधांबुदनीपमहिलो—
स्मिपमापामिषतेण पावेनः ॥ ९७ ॥

मदमोहितवंहितोज्झितं
धिमवृन्तगुणपुष्टिमिच्छनः ।
धन नम्र वनीरपादपं—
मनुतिप्यांभूरिपामयपनु ॥ ९८ ॥

कलिराजमनुप्रतीक्ष्मां
दधदाप्यायदनुज्झितादर ।
जिनराजमगात्मभूषणं
गुणकेयाचलतं स मानवम् ॥ ९९ ॥

गजयूथगृहीतमंडित
जलमध्ये स निपातुमिच्छया ।
उपदाल्यमभूडवर्द्धमं
विजगाहे गहने जलाशयम् ॥ १०० ॥

निर्यमं कलानागमश्रम
चलितुं गाढमुदस्य कर्दमम् ।
मनुवंडगत स दृप्यान्
गजराज कृपयानुपश्यत ॥ १०१ ॥
अभिपत्य स पूर्वया कया
नयनाभ्यां विमवह्निमुद्वहन ।

---

१ गज ।

यियुंदा यत्रस्य मस्तकं
न मूर्तस्य दयास्ति कापुनु ॥ १०२ ॥

अम्भोत्तिलुब्धेय मर्कटी
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ १०३ ॥

[illegible]
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ १०४ ॥

[illegible]
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ १०५ ॥

[illegible]
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ १०६ ॥

[illegible]
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ १०७ ॥

[illegible]
[illegible] ।

[illegible]

तृतीयः सर्गः ।

अभयत् स पतिः स्वयंप्रभ—
प्रथितास्थानविमानसंपदाम् ॥ १०८ ॥

स मुहूर्तमसमयौवनां
तनुमिद्धां शयनोपपादिताम् ।
अपहन्नयदीव्यपोडशा
भरणाभिद्युतिपिण्डगर्भिताम् ॥ १०९ ॥

नयरत्नमरीचिमेचकैः
शयनीये स निषेदिवान् क्षणम् ।
प्रभुताब्धितरंगसंगिन—
स्तपनस्यानुचकार भास्वरः ॥ ११० ॥

स विमानगुहाद् विनिस्सर—
न्नमरैर्दुन्दुभिनादबोधितैः ।
जयकारनिरूढिहर्षितै—
रीक्षितः सांजलिबंधमस्तकैः ॥ १११ ॥

अधिरोप्य मरुत्पर्यटिकां
स्नपितस्तत्र सुधया सुधाशनैः ।
जिनस्नाद्रितटस्य संदृशं
श्रियमद्युतिमभ्यवर्षिणः ॥ ११२ ॥

निपतत्कुसुमाञ्जलिच्छलात्
स्वयमेव प्रतिपूजनधिया ।
सविलासमुदासन ध्रुवं
धवलस्मितधवकटाक्षपद्धतिः ॥ ११३ ॥

वनितामुखचन्द्रमंडल—
क्षणदालोकनवच्छदारमूर्तैः ।

१ प्रयंभ । २ ईदं ।

दिग्भित्तयः सुकृतिनो जनने समंताद्
गंभीरदुंदुभिरवैः स्फुटिता इवासन् ॥ १२० ॥

पश्यन् स वैभवमिदं सविचारचेताः
प्राप्यावधिं भवनिमित्तमुपेत्य धात्रीम्।
हेमारविंदनिवहैरुरविंदमुखं—
रानर्च तच्चरणपातितरत्नमौलिः ॥ १२१ ॥

विविधकुसुमवर्गैः प्राच्यमभ्यर्च्य देहं
झपदि सुकृतवेदी स्वर्गमभ्युज्जगाम।
मुकुटमणिमयूखैर्मल्लिस्रग्प्रकृते—
र्व्यमिमिलसदखंडामर्त्यकोदण्डलक्ष्मीः ॥ १२२ ॥

आख्यां शशिप्रभ इति प्रथितां दधानो
देवः स द्रोणशतपत्रपलाशलेश्यः।
मासाष्टकं सुरभिनिःश्वसितैकवृत्ति
स्वर्गं बभौ चतुररत्निवपुःप्रमाणः[1] ॥ १२३ ॥

भोक्ता वर्षसहस्रषोडशतया दिव्यामृतस्याहार—
स्त्रोमान्विगनलपरस्परमथाल्पितुष्टमथीनिधिः।
तरश्रीं दिव्यवधूकटाक्षनिपतन्नेत्राधिकेपावली—
निस्यासेव्यमनोज्ञमूर्तिसुमनाः स्वर्गेऽधिराज्यं यान् ॥ १२४ ॥

इति श्रीवादिराजसूरिविरचिते श्रीपार्श्वनाथचरिते
महाकाव्ये वज्रघोषस्वर्गगमनं नाम
तृतीयः सर्गः।

---

1 षोडशमानरप्रमाणशरीरधेन।

चतुर्थः सर्गः ।



प्रवृद्धजंबूद्रुममुख्यलांछन—
　　प्रभावितद्वीपविशेषमध्यमः ।
निसर्गहेमच्छविमंडलोद्गरः
　　स्थिरस्वभावोऽस्ति सुमेरुपर्वतः ॥ १ ॥

समंततो यः प्रभयावगाहते
　　नभःप्रदेशांस्तपनीयपिंगया ।
जिनार्भकस्नानपयोरसाप्लुतः
　　सदा विवर्द्धिष्णुरिवावतिष्ठते ॥ २ ॥

बिभर्त्ति यः स्वयंनिनायिनर्त्तनं
　　नयस्वभावं सुरतौलसंगतम् ।
गुहागृहेष्वप्सरसामपि व्रजं
　　प्रियांकशय्यासु रतौलसं गतम् ॥ ३ ॥

पयोधरभ्रंशितमुंमदंशुका
　　विभक्तमूलागतहस्तविक्रिया ।
वधूरिव प्रेमवती दिनात्यये
　　यदंगमालिंगति तारकावली ॥ ४ ॥

स्थिरप्रकृत्या जगति प्रतीयते
　　नितांतमाक्रांतमरुत्पथोऽप्ययं ।
रसातलस्थोऽपि दिविस्पृगुच्चकैः
　　रविस्वभावोऽपि सुवर्णसंभवः ॥ ५ ॥

सुवर्णवत् । २ देवाना तालेन मर्द्दितं । ३ रतेनालसभावं प्रातं
धरो मेघ स्तनश्च । अत्रार्थ किरणाः, अग्रुकं वस्त्रं च । ५ व्यासावकाश
विहारः । ६ अचल ।

सुरद्रुमच्छायसुरेषु सानुषु
प्रभूतगीतं सुरसुंदरीगणम् ।
करोति यस्मिन् मणिरश्मिभूषितं
गुणो हि तन्वेव रसायनादिनः ॥ ६ ॥

अनोकहा यस्य निरंतरोद्भवा
नभोऽधकंधेस्तरणप्रमोदभे ।
अनारतं बिभ्रति पर्णसंहतीः
प्रवालमायाततियाश्रिनीरिव ॥ ७ ॥

पतत्रिणां यत्र जलाशयोद्भवं
न पुंडरीकाकृति पांडुकंबलम् ।
तनोति न श्रीजिनराजमज्जनं
शिलातलं बिभ्रति पांडुकं बलम् ॥ ८ ॥

विवेकचारि विषयेषु मध्यमः
समस्तलावण्याभूदयासतत्पथः ।
प्रपद्य यः स्वप्रभया तनूभृतां
व्यनक्ति विद्वानिव लब्धवर्णताम् ॥ ९ ॥

महीयसो दंतदर्भांशुमंडल
प्रकाशितव्योमगृहोदराश्रये ।
नितांतमंधंकरणं शरीरिणां
न यत्र रात्रावपि जृंभते तमः ॥ १० ॥

चकास्ति नित्यं विषयोऽस्य भूभृतः
पुरो विदेहे महनीयवैभवः ।
जिनेश्वरश्रीमुखनिर्गतं यतो
यमाख्यया शंसति पुष्कलावतीम् ॥ ११ ॥

उदक्तटं मंडयति स्वमुर्णं—
श्चिराय सीतासरितो नितान्तम् ।

कमलाकराणां कुमुदाकरैरपि —
    [illegible] तस्मिन् [illegible] ॥ १२ ॥

यदि [illegible]
    [illegible] गुणो भवेत् ।
[illegible]
    न [illegible] भुजङ्गमेन [illegible] ॥ १३ ॥

[illegible]
    [illegible] ।
[illegible]
    [illegible] ॥ १४ ॥

[illegible]
    [illegible] ।
[illegible]
    [illegible] ॥ १५ ॥

[illegible]
    [illegible] ।
[illegible]
    [illegible] ॥ १६ ॥

[illegible]
    [illegible] ।
[illegible]
    [illegible] ॥ १७ ॥

[illegible]
    [illegible] ।

[illegible]

अतोऽथवार्तावसरापि संदर्भ

नृपस्ततस्त्वैव विमानि भूमिभृत् ॥ १८ ॥

प्रविश्य नगमानलसंगतांशुभिः

सदृशैर्यासाद वर्त्मा मयमरः ।

निर्दीय त्वदं चभिया प्रियापुरीं

स नूमसातिनाशतलत्विनांचलम् ॥ १९ ॥

स दीपनोत्संस्त पवनमानुष—

व्यगान्तरायातिविपदारंबलो ।

पिबन् प्रियागुरुगणुवंशुमंडल—

स्तुतायोगमृत्तगात्मयुक्ती ॥ २० ॥ ।

इति प्रियापालमयोरतुतिनयो

संभूय पुत्र. शुभवसंगिनयो ।

स यं समान्यांति शतिशयभावं

हिपवगुणोपाय ततः गुणामणम ॥ २१ ॥

स आनमायां पत्याधि वाग्मिनो

अंबन विध्वान गुणादिमसिर्गुर्णो ।

ततः समाम्नायम चरितमंबता ह—

र्वामिन्यया वंधुमंनम बंधुरम ॥ २२ ॥

स भुबंधनुन्नोदितपाणिपंकजः

स्वभावनिर्धूतनमा नयोदय. ।

निज् रविपां निजिंगांवितनो

व्ययनं नित्यं सुवच्चारिणः स्वभान ॥ २३ ॥

पितुः प्रयत्नेन मुंडे स शेफित.

सुविस्मितानविदंतानानुजिगंम ।

अनाकितोपर्क्षितसंहिकांजनान्

वियत्यविद्याधिदृगि व्यबोधयत् ॥ २४ ॥

———

...धीगमद्दमणाद्विनमपि । २ मुग्धा गीर्वाणी विरणाय ।

[illegible]
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ १३ ॥

[illegible]—
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ १४ ॥

[illegible]
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ १५ ॥

[illegible]
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ १६ ॥

[illegible]
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ १७ ॥

[illegible]
[illegible] ।

[illegible]

[illegible]

तदेव यं संसदि चक्रवर्तिनं
स्युदाहरंति श्रुतवृत्तवेदिनः ॥ ६८ ॥

अयुध्यत स्वयमपि प्रजाहिते
प्रवृद्धरोषोऽपि ररक्ष स क्षमाम् ।
स भूपताऽभिज्वलितोऽपि तेजसा
प्रजाधनस्नेहगुणं व्यलीनयत् ॥ ६९ ॥

प्रभूतदानः स मदान्धयायिने
बभूव नक्षत्रतया विनाऽभिजित् ।
अहीनवृत्तिर्विजहौ द्विजिह्वतां
विना स्वयंदाम्य विषार्द्दिता जनैः ॥ ७० ॥

यदाम्यकमां स जदन् भुजंगता-
मपि व्यधात्री पुभुजे भुजं गताम् ।
प्रजासु चक्रे कृपया स बंधुतां
कामसृष्टया विहितोत्सवं धुताम् ॥ ७१ ॥

स पापदंतं निजकीर्तिमामिनी—
प्रवेशदानादिव मुष्टमानसः ।
यतोऽमृताह्यायनदन्तमृत्तिका-
श्चकार सुमा रविरश्मिभिर्दिशः ॥ ७२ ॥

निसर्गसेव्ये नृपतौ महागुणाः
स्थितिं गतास्तत्र यदृच्छुतम् ।
अनस्य दूरेव सतोऽपि चेतसि
स्थिरानुरागप्रसवस्य धीजताम् ॥ ७३ ॥

उपार्जितक्षेमविधानदीक्षितो
गुणैर्गुणज्ञोऽयममूल्यधारिभिः ।

१ कर्मी । २ विटलम् ।

तया नु मीनध्वजमत्तनाकया
    मलीमसुधच्छकरानुरूपयोः ।
गुणेन संधानभृतोर्ध जंघयो—
    र्मनस्सु न व्यंजनं साधु पश्यताम् ॥ ८७ ॥
करेणुकांताकरवृत्तपीवरौ
    मृगीदृगूरू हि गुरू पराजितौ ।
प्रदीनरूपस्तम्भसंश्रयाविव
    व्यमासिषातां नवचंपकच्छवी ॥ ८८ ॥
अनेकपश्रोल्लिखितायनं जरा
    गुणं नडूर्वोरिव जेनुमक्षमा ।
घनस्थिति काचिदयाढिल्लत्रया
    विरज्य रम्भास्विनगात्मरोगता ॥ ८९ ॥
मनोरमां पुष्टिमश्रयमाक्षिपन्
    स यौवनो नूतनरत्नमेखलाम् ।
चकार मारालयनित्यसन्निधि-
    प्रसंगलीलां मुहरीकटीतटः ॥ ९० ॥
विकीर्णरत्नांशुनिरस्तदुस्तमः-
    प्रपंचकांचीविभवो विलिर्यसौ ।
वृहन्नितंब मुनगोन्नतभृतां
    न दक्षिणाशाधिपयो अनाश्रयः ॥ ९१ ॥
तनोतु मार्गांभयपार्श्ववर्तिनो
    मिथेथ भूयः स्वविरोधिनो गुणान् ।
चिराय मध्यस्थनयापि पश्रथे
    गुणाननिघ्नन् कृशिमा मृगीदृशः ॥ ९२ ॥
विमुच्य संभूय सुवर्णहारिणं
    नितंबमुर्धयंस्त्रिभिनंतभ्रुवः ।

१ शोभनवर्णहारिणम् ।

न मध्यदेशो वपुषे न यथिरं
भवेन् कृतात्मस्य फलं सदीदराम् ॥ ९३ ॥

गुरुस्तनमुक्तामयतां स्वसंगिनो
गुणेन दारस्य समृद्धिमोजसा ।
प्रयोजयंतावपि साधु सुभ्रुवः
कथं न्यभूतामविवेकिनौ स्तनौ ॥ ९४ ॥

समप्रभूभृन्मणिमुक्तरागमा —
घमेरवृत्ती पृथुलघमंडलौ ।
स्मरस्य मूर्धा नयवित्क्रमाविव
स्तनौ तदीयावुचितं यदुद्धतौ ॥ ९५ ॥

मदीयमौदर्यविनिर्विनिम्मित
स्मरेण रागो रमये चिरोदितः ।
प्रकल्प्य मूल्यं नयनद्वयश्रियं
यतो मृगाक्ष्याः क्रमममहीद् ध्रुवम् ॥ ९६ ॥

भृशं कृशांग्याः करआयतांगुरे—
नं केनकामृचिरमभ्रे पंचभि ।
चिराय जेता मदनो महाभुज—
स्तदादि यत्र किल पंचबाणताम् ॥ ९७ ॥

न्यधत्त नखद्युतिजालमांसले
धरद्रुमस्कंधममाथये वधूः ।
मनोज्ञलावण्यपयोनिषेचिते
मृणालपाले वलयंबुजालने ॥ ९८ ॥

निसृष्टसंगममृतान्मकंपेषु
द्वितीयमिंदोरिव सुंदरीमुखम् ।

किमत्र चित्रं यदि तेन लीलया
विजिग्यिरे पंकजसंश्रयाः श्रियः ॥ ९९ ॥

समुल्लसत्कांतिमयांशुसंभृते
मुखारविंदे कमलाकरो भृशम् ।
[illegible]भिन्न[illegible]मीशयो -
र्नतभ्रुवो [illegible] श्रियम् ॥ १०० ॥

अपांग[illegible]
[illegible]हारिणी ।
[illegible]
[illegible] ॥ १०१ ॥

[illegible]
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ १०२ ॥

[illegible]
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ १०३ ॥

[illegible]
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ १०४ ॥

[illegible]
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ १०५

गृहीतपूर्वस्थितिकां महीभृत—
स्तटीमिवात्युज्झितरत्नमंडनाम् ।
उपास्त कांतामुदयार्थमर्कवद्
दिवः स देवः क्षणदीधितिप्रभः ॥ १०६ ॥

अपाङ्गगापोऽटवाये शिशोः
क्रमात् प्रवृद्धां दिवसेष्वनाकुलम् ।
मियेव तस्मादनुबद्धवृत्तिभि—
र्विमुक्तमासीद् वलिभिर्वधूदरम् ॥ १०७ ॥

अखण्डभूमंडलरक्षणक्षम—
प्रमाथमंतर्दधती समर्भकम् ।
प्रकृद्धवेव जहे मदांजसं
निजोदरक्षामतया नितंबिनी ॥ १०८ ॥

निर्पादवंगेष्वथ गर्भदायिनः
शिशोर्गुणानामिव भूरिगौरवम् ।
अभिव्यनक्ति स्म गजेंद्रगामिनी
विमोदलीलास्खलसेन कर्मणा ॥ १०९ ॥

सखीप्रकोष्ठं प्रतिगृह्य गर्भिणी
कथंचिदुत्थाय कृतांजलिक्रियाम् ।
नृपः कृपाहर्षविमिश्रया दृशा
गृहागतो धि क्षणमैक्षत प्रियाम् ॥ ११० ॥

उदूढगर्भां दयितां प्रजापति—
र्निधानगर्भामिव भूतधारिणीम् ।
अनेकविधाजपहोमकर्मभि—
र्विसकरक्षाविधिरन्वयर्नत ॥ १११ ॥

---

१ स्कंधम् ।

प्रवर्तिता पुंसवनादिषु क्रमात्
स विक्रमी दोहलभेदमाहितः ।
अपृच्छदथ शृण्वन् सुहृदाः सखीजना—
ज्जहर्ष सत्पुत्रविनिर्णयावहम् ॥ ११२ ॥

स्फुरत्प्रभामंडलमध्यवर्तिना
विजित्य चक्रेण दिशां विशांपतीन् ।
स्वपादमूलाननमौलिमस्तकान्
व्यधात् समुत्साहवती सती सती ॥ ११३ ॥

तथापि सा पीनपयोधरा वधू —
र्निधीन्विधेयान् प्रविधाय धामभिः ।
बभूव युक्ता भुवनस्य तर्पणे
धनाभिलाषग्रहनिग्रहेच्छया ॥ ११४ ॥

प्रभावभूयांसमणागुलच्छवि
महीशमालागुणरूढमुन्नतम्
अजीजनत् सूनुमिलापते प्रिया
खनेर्धरित्रीव विनिर्मलं मणिम् ॥ ११५ ॥

ग्रहैरिवास्याखिलदिक्प्रभाविनो
भविष्य भाग्यं भुवनमुल्लसिष्यत ।
प्रसूतिकाले हसितो नवग्रहैः
शुभेनगायस्थितिरभ्यसूच्यत ॥ ११६ ॥

उदीर्णतेजः प्रसरेण साक्षिणा
करग्रहणोपरिभाविनं पतिम् ।
सर्वाश्चर स्पष्टुमिवोदित दिशो
निरागुर्भोदयदाभिवेष्टनम् ॥ ११७ ॥

त्रिकस्वगेहाबलमाविननंनः
हृताः स्वगेमुष्टिकृदभुग्नजाः ।

मदाय सिंचन्निव देहिनः शनै—
र्ववौ तदानंदसमुद्रसीकरैः ॥ ११८ ॥

स्वयंप्रभापोपनतास्तमोपहा
नृपेंद्रविद्या इव रत्नदीपिकाः ।
परीत्य तं पुण्यनिधिं चतुर्विधाः
हिरण्मयूखोद्दिशितांबरा बभुः ॥ ११९ ॥

कृतालिंधमालिकनिभ्वनलया
दिवः पतंती कुसुमावली तदा ।
व्यधादनाघ्रातचरेण हारिणा
जनस्य गंधेन वसुंधरातलम् ॥ १२० ॥

निशाम्यमानेन विसृत्य दिग्गजैः
क्षणं समुत्कंमितकर्णपल्लवैः ।
गभीरतांमध्वनिनाभिचुंबितं
तदांबरं शब्दगुणं व्यजृंभत ॥ १२१ ॥

मुखेन हर्षामृतबिंदुवर्षिणा
निवेदितार्थं पुनरुक्तया गिरा ।
इदं भुजिष्या समुपेत्य सत्वरं
नरेंद्रमास्थानगतं व्यजिज्ञपत् ॥ १२२ ॥

व्यपाचि शुक्लेन जनस्य कर्मणा
तवाभिमेवारसवेदिनोऽधुना ।
असौष्ट पुत्रं सदभिष्टुतं गुणै—
र्यदद्य पृथ्वीश्वर भर्तृदारिका ॥ १२३ ॥

भुजेन पूर्वं वहतस्तयोर्धरां
महायवानित्यभवद्य यद् वचः ।

---

१ पूर्वमनाघ्रातेन । २ शब्दो गुणो यस्य । ३ दास्या । ४ शुभेन । ५ ...नकुलम् ।

भ्रमद्द्विरेफप्रकरायगुंठितो
व्यधत्त साक्षादिव मेघदुर्दिनम् ॥ १३७ ॥
मदांधमारुह्य महागजं नृपः
प्रयन् स वीथिष्विभयूथवेष्टितम्।
प्रभुर्विलस्तार कृतस्तवो जनै—
र्जनप्रियामंबरभूमिमंबरात् ॥ १३८ ॥
क्षितिपतिमवलोक्य प्रौढदर्शातिभाराः
हयपुरनुपवीथीं सौधशृंगाधिरूढाः।
अतिमधुरमगायन्नंगनाः काश्चिदन्याः।
ननृतुरनुनयीर्षाभिःक्षणैर्धिक्षिपंत्यः ॥ १३९ ॥
शुभदिनसमयाप्ते स्नानमुद्रापमात्य—
रधिगतनयमार्गैर्गृहदेश साधम्।
अभिमतमभिरम्य श्रीणनम्राणियर्गं
ततयमकृत नाथः प्रमनाश स भूपः ॥ १४० ॥
समाभोगरम्भरसमस्य विमलैः पवित्रैस्वाक्षादिन-
स्नमांशोस्य विकासमुपसुकतया लिप्मांशुधामाश्रयम्।
हस्यापाशनिविर्यंकम्नया नानीगमाकांक्षिणी
नक्षौ पुष्पनलीकदम्ब मकला स्कर्षाश्मणेजाश्रम्॥ १४१॥
मूलांकाधिपनन्दनस्य प्रसमानशास्त्रनोत्पादिमः।
प्रातस्य प्रभुगनुरागविगमामुधः प्रवेनोऽदितम्।
स्यानांसभ्रगर्भादिग्रमुनिधिसोमस्य धान्यैर्धिना
बाल्यंयुग निशाकरस्य प्रगमा गक प्रनामांतदिशः॥ १४२॥

इति श्रीवादिराजसूरि[illegible]
[illegible] नामश्चतुर्थः सर्गः

समाप्तः

पंचमः सर्गः ।



विजयातलयः स वर्धमानः
सह बंधुमदेन सन्मुखश्रीः ।
निजपुर्यविनिर्गमयेव पश्चाद्
गुणमुख्यैरनुबंधिभिः सिषेवे ॥ १ ॥

विनिरुद्धतमस्तु तेन भूयः
कमलानंदकरेण भास्वतेव ।
घनवीथिविराजितासु दिक्षु
प्रचकाम जननी नयोदयेन ॥ २ ॥

अपि पश्यनमुख्यप्रजाना -
मुपसेवाफलद. स दोषहारी ।
अभयन्महतः स्वयम्य हेतु -
र्द्विपमां देयमचिन्तनीयशक्तिः ॥ ३ ॥

गुणयत्प्रतिपत्प्रमाधुसंधि
प्रथमोद्दीपितवृद्धिमायनुद्धम् ।
प्रथनः पितुराज्ञयाऽप्यगीर
स्वसमं व्याकरणं स्वपूतचौल ॥ ४ ॥

प्रतिबोधशाचिनदर्पभंगे
बलिना तेन कृते मदोदयेऽपि ।
विनया विजगादिरे दर्पात -
द्विपनादैर्न यथामतं नदीशः ॥ ५ ॥

इहिमानिविडं तदंगसंधि—
व्यनुषप्रश्रनुजीविभिर्ययस्यैः ।
अजनिष्ट दुरत्ययो गुणानां
बलघता न विना प्रधानसेवाम् ॥ ६ ॥

चतसृष्वयमुद्यमादधीती
नृपविद्यासु निरूढसंप्रदायः ।
विजहे निजबाल्यकेन सूनु—
रयथाकाममवस्थयेव राज्ञः ॥ ७ ॥

विकसन्मुखचन्द्रकान्तिकान्ता—
च्छविधौतांबरसुविहंसमुष्टम् ।
न शरत्समयस्य सन्सरीव
प्रतिजग्राह वपुः स यौवनश्रीः ॥ ८ ॥

परिणायतचारुबाहुबाव
कृशमध्यं धृतिमत्रिशालवक्षः ।
अजनिष्टजनां श्रिये विचित्रं
वपुरस्याजमनोहरं तदीयम् ॥ ९ ॥

विकचाम्बुजहारचक्रचिन्हं
दधदोजः स्थिरसीमनिघ्नमध्यम् ।
कमलाकरनाभिवाचवक्षं
विलसत्पाणितलं नृपात्मजस्य ॥ १० ॥

अधिराजसमागमेति नृपस्र—
विनयश्रीरचिरेण यज्ञनामः ।
नयपौभिरभासमेहति सिद्ध
गुरुशिक्षानुनये क्रमेण लेभे ॥ ११ ॥

मदिनो धर्मयोगद्विषा
रसधारासभिनो विवेकहेतुः ।
न हि नाम पर करे कृपाण
कमलोद्भासिनि निर्वनं मुखेऽपि ॥ १२ ॥

---

१ युद्ध [illegible] च ।

अनिर्मलानलक्षिप्तदंतर्पाट—
स्वपत्नीपा परदृक्प्रवेशादृशा ।
नयतत्त्वविदो न हन्त पश्य
निजसत्त्वं नरला कलेऽपि तस्य ॥ १३ ॥

गुणकोटिप्रयेण कर्दिमाजा
हितपक्षप्रतिपक्षविमंथनेन ।
कलितं न मयानिमेष एव
दृढधर्मेण मनोऽपि धर्मजेना ॥ १४ ॥

फलमभिमुखमंस्तरीयो
गुणयोगक्रमसाधनाभियुक्तः ।
कणयः प्रतिपिपर्यति स्म स्वयं
रिपुराजन्यमनांसि च प्रमादः ॥ १५ ॥

तारपायि नयनार्जायमुख
यत्नमुर्वीतल्ले करमहेण यस्य ।
घनपांसुकमण्डलं स विधा—
मनुजीलस्य किं पुनर्जिगीषुः ॥ १६ ॥

नयशीयनसंभृतागसापि
कृतनिपाधिगमं समुपैरेताम् ।
मनयाः स्वयमेव निन्युरर्थं
पृथुकुंभाटहनालिरिव्यमध्याः ॥ १७ ॥

यदनेऽधरपानलिप्सयेव
प्रतिलग्नं दारिद्रदुर्विधकाले ।
वरहारमयूखमंडलेन
स्तनयोः संनिहितं युयुत्सयेव ॥ १८ ॥

१ नृपाणाम् ।

कनकांगदमृष्टंसलं यथंध
स्खलितात्मानमिव स्थितं च बाह्वोः ।
नखरद्युतिनिर्गमच्छलेन
प्रचुरं पाणितलादिव क्षरंतम् ॥ १९ ॥

श्रवणोरिव दीर्घलोचनाभ्यां
धवलापांगरुचा निषिच्यमानाम् ।
मनुजन्मतयेव मुग्धमूर्ति
स्थिरमास्तत्र निविष्टमंसदेशे ॥ २० ॥

निकटस्थगभीरनाभिकूपं
नमदंगं वलिभं कृशिमि मध्यम् ।
स निपातभयेन मध्यदेशं
कृपयेव स्थगयन्गुरुस्तनम् ॥ २१ ॥

सगुणं मदनंश्वरायतनं
गुरुनितम्बोरिव ंकलं गरिमः ।
स्मर्णीयमयेव सोपशोभं
जघनं सच्छद्रितानममग्नांतम् ॥ २२ ॥

मदनी परिणीय ना॰ स शोभी
पृथु लावण्यमय गुण मधाम॰ ।
मदन मनुराधिन पुणाव
प्रकृतिमथ हि गभिमानिमश्रा ॥ २३ ॥

सच्चिरिर्मनिश्च धीमगाये
ननय यमंहर विमान्य गामा ।
निम्नमुद्रमादिवानिगिम्बो
निरर्थी मय पुर यनुंधरागाः ॥ २४ ॥

अभिहाय मदीनमाधनंनी
गुणगाऊं विमकाग गाजम्यर्दाः ।

मदनोर्मिविधाऽधरात्मजा
सुरभिर्धीः सखिकागर्वदनम्या ॥ २५ ॥

अचिरागमनर्थापगात्यसिद्धे—
नृपसूनोः श्रमतो दिदृक्षयेव।
भुवनमलमुपागमद् वसन्तं
प्रसरोपवनसंप्रदानपूर्वम् ॥ २६ ॥

अयमुत्य निजालयं विधाय
परिणायाः शरदो हिमागमार्द्री।
भुवनामधुलपर्णिव प्रसवं
हिमबिंदुप्रकरैर्वियत्यपारे ॥ २७ ॥

शरदः सुहृदो रुपेन शेषा
परिनायाः सुतनां मरालपंक्तेः।
पुनरससिनिर्दिर्दिशंमार्ष्यं
सुदिनं गल्भमिपांपदं स्वरैत्मीन् ॥ ५८ ॥

हिमसीमलयातसंनिपाता
दिव भीत्या मत्पस्ंधिर्जीर्णपर्णैः।
वसुधामदगोदरेषु पंके
नफलायाः प्रविमुक्य सन्निवेशाः ॥ २९. ॥

समये हिमवर्षिणि व्यतीते—
प्रणयस्वामिमयाद्वियोगजान्मा।
अमनागपिनाम्भस कुटीरं
सुयराजस्य पुरे कृशोदरीणाम् ॥ ३० ॥

शिशि दिवसुपचीयमानमूर्ति—
नृपसूनोरिव शत्रुभीतसिर्श्व।

—भासम् । १ पाठ ।

शिशिरः स हिमर्तुरेव जज्ञे
विरहस्त्रीहृदयप्रकंपकारी ॥ ३१ ॥

इतरेतरकुट्टनक्कणद्भि—
र्दशनैः सप्रभुजस्य दीनकंपाः ।
स्खलदक्षिसरुः प्रयाननम्रा—
मविशन् कर्पटिनः सवेगमंगे ॥ ३२ ॥

निशि निम्नतया हिमं निपीय
प्रचुरं प्रातरिदं वपुष्यजीर्णम् ।
अथ मामिव वर्तुलस्थवीयं
प्रमथच्छ्रमनया मधूकवृक्षाः ॥ ३३ ॥

मधवोऽधिकलाः स्वयमेव—
स्तुहिनांशुमनुप्लाव्य तीरवृक्षाः ।
भृशमल्पजलद्विपाग्रमनीतं
हिममग्नं कमलाकरं प्रभाते ॥ ३४ ॥

शिशिरांगनया करांग्रजाग्नि
सह यत्नैः परिवृत्य गोपडिंभाः ।
स्फुरदल्पन संभ्रमायं वाहन्
ह्रियमाणा नगरात् बहिस्तडागाः ॥ ३५ ॥

वनिताजनमानताल्पतांबं
मणुदन् शीर्णमिवाशु पर्णजालम् ।
प्रथमेऽहनि देहकांतिहारी
पवमानः प्रथयो मधूकगंधिः ॥ ३६ ॥

अग्रहिष्णुरिवेक्षितुं नलिन्याः
क्लिन्न तस्मात्तदनागतं निकायम् ।

विनिर्मितेन विलसत्तपनेन
    तपनं सर्गविनिर्मितमु प्रतयं ॥ ४७ ॥

निशीथिनीषु सागरीयं
    शशिमयूखसमर्पितनायकादाम् ।
वनितानामसंगतेषु गच्छां
    गगनमार्गवशेषु वादपुष्पा ॥ ४८ ॥

कुमुदवनगतस्य मुखारविंदा
    कमलखंडवनसमांतराणि ।
नयनं कर्णविवरपदमु स्वयं
    प्रददौ मुखपद्मगुंफं वनितया: ॥ ४९ ॥

ससितदीधितिदीधितिमण्डला
    शिशिर वासरमार्गपदमृपगतैं ।
विनिवर्तितमंदसमुद्गमा
    पुनरेव कांक्षितं नटेशमनिशीं ॥ ५० ॥

अथ नंदितमानसमुत्सुकंधि
    विकसत्कुसुमांकुरस्निग्धगात्रः ।
वनितामुखरंजनसंगृहीतो
    मुखपद्मनिमीलितेव न निर्विवेदा ॥ ५१ ॥ युग्मकम् ॥

ऋतुना गगनेन नेत्र लीला—
    दिव पद्मदिग्वलदलप्रभाषायाम् ।
विशदं चलयं दिशामनेन
    कमलमालयवमधरांशुना ॥ ५२ ॥

शिशिरस्तलक्षणविधिग्धानां
    न विधाता कं नु वर्तते दुरात्मा ।

---

१ सूर्य । २ बसंत ।

पटुकोकिलकूजितैर्वसन्तो
मनसिजमाजयतीव मंत्रविदः ॥ ५२ ॥

अनुरागकृतः सुगंधिपुष्पैः
सुरभेमासस्य नवेन संगमेन ।
प्रभवन् पवनाहतः प्रसूनो
[illegible] ॥ ५३ ॥

[illegible]—
[illegible] ।
[illegible]—
[illegible] ॥ ५४ ॥

[illegible]
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ ५५ ॥

[illegible]
[illegible] ।
[illegible]—
[illegible] ॥ ५६ ॥

[illegible]
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ ५७ ॥

[illegible]
[illegible] ।

[illegible]सुर्भसंकरस्य—
स्वपिति नलिनराज यत्र मन्दविपन्नीनाम् ॥ ४९ ॥

दलितसरसिज[illegible]-
[illegible]मोपनागमुद्यम् ।
पवनः सविलासं वाति[illegible]
दूरवर्ति[illegible] मनोरथम् ॥ ५० ॥

मुकुल[illegible]—
[illegible] मलयानिलनाभिसुंदी ।
मनसीभवनं प्रविश्य यातु
[illegible] ॥ ५१ ॥

परिचय मदन. [illegible]
समयासुमनसृत. सुगन्धः ।
स्त्रियं[illegible]पुष्पमाला.
वन तंतु प्रमदा[illegible] ॥ ५२ ॥

[illegible] प्रगते.
[illegible] ।
अनङ्गस्य यत्ने चतुर्विभागं
परिचय[illegible] समर्थित प्रयाणो ॥ ५३ ॥

सुरभि[illegible]लेन मलिनाया—
मलिनाम्बोरुहपटलेन पुष्पचयाम् ।
नयन[illegible]लग्नेन
मलने किलकमोदयुगेन हृदयम् ॥ ५४ ॥

मधु[illegible] किरातकामिनीनां
मुखमुखे मधु [illegible] फुल्लः ।

१ विर्भिष । २ कला ।

मधुरैरनुनासिकैः स्विरेभे
    [illegible] ॥ ५१

[illegible]
    [illegible] ।
[illegible]—
    [illegible] ॥ ५२ ॥

[illegible]
    [illegible] ।
[illegible]-
    [illegible] ॥ ५३ ॥

[illegible] —
    [illegible] ।
[illegible]
    [illegible] ॥ ५४ ॥

[illegible]
    [illegible] ।
[illegible]
    [illegible] ॥ [illegible] ॥ युग्मम् ।

[illegible]
    [illegible] ।
[illegible]
    [illegible] ॥ [illegible] ॥

[illegible]
    [illegible] ।
[illegible]
    [illegible] ॥ [illegible] ॥

मृदुमृदितैर्वनवासवश्या
    वनवीत प्रसूनं नु धर्मकाले ।
शिशिरो मरुत् न सम्भविष्या
    शिशिरं संस्रवितांगपुताने ॥ ६२ ॥

सुरभीकृतवर्तितवर्तनो—
    भिन्ने दू.ल.विलाधिकैः स्थानैः ।
अगृहे वनवर्तिविहंग मीनं
    न पुनरागमनमथागमायवस्तानम् ॥ ६३ ॥

विपिनदुमतादुल्लर्वित यम्
    प्रवदोद्गम प्रमानपाटवानि ।
विविधप्रसवान्तर दुर्गन्धितयो
    मधुपरागस्य समूनि विशालिताम् ॥ ६४ ॥

नवनालमिवेन नीरन्ध्र
    मजलिरोगिवधिमांधवाशितेषु ।
शिशिरस्य पल्लवप्रतापमन्युः
    कुसुमागाधमहादंष्ट्रः मघः ॥ ६५ ॥

अभिनवतिमिरसमारिधार्थैः
    परिमृश्यास्तु पिबन्त्यंशपरिश्रयः ।
करकिर्णीय भानुवन्यं द्विष्या
    कविदर्धवर्णगभिनगंधमूर्ये ॥ ६६ ॥

स्वमशून्यतया विदारितास्या
    यदनोज्ञान्तरोधितालभृताः ।
अश्रयन्त कर्कुभो निदाघरूपाः
    यथि दाहस्य इयामुपमहिर्मान्ये ॥ ६७ ॥

---

१ दिश. ।-

निरस्ताः पङ्कजपुटाः मनोज्ञाः
पश्चिकोद्भवफलो निरुद्धनालाः ।
अजिरे मणिभिर्वसन्तजाताः
गुम्फिताम्बरस्य [illegible] ॥ १८ ॥

[illegible]
[illegible] गम्भिता शिरेषु ।
नवमीति नागतो निपुणाय
[illegible] ॥ १९ ॥

[illegible] ॥ २० ॥

[illegible] ॥ २१ ॥

[illegible] ॥ २२ ॥

[illegible] ॥ २३ ॥

सप्तमः सर्गः ।

विपरीतेषु विद्वेषिणे विपक्षे
वन्यपशुष्वपि भानुमत्प्रतापे ।
विमलाम्ब विदेह देहधर्मे
प्रतिपत्तावनुचे प्रभाजनेषु ॥ ७४ ॥

अचलं विमलायमानजाया —
मधुमासर्यादिव वर्धितैः मयूखैः ।
मृदुभंगतरंगसानुकान्त्या—
मणिभिद्रत्नभित्त्यंशुमंडिते ॥ ७५ ॥

विविधोऽपि निसर्गवासनार्थं—
त्वनुभावातिदिवोऽमलां निपाने ।
मधुराम्परिवेणवर्तीषु परस्य
परिपूर्णे नवसंनिभप्रभाणाम् ॥ ७६ ॥

दरिसंपद्भिद्य द्विजपूर्णे—
विपुलोत्कथितमोदतापदैः ।
विसृतान् कलधौतेन कान्ता—
कुचकुंभौ नवदर्शितनवंदीप्तौ ॥ ७७ ॥

मधुरस्मितनिर्गमं विपंची—
गुणशिथिलभयं नृपस्य पुत्रः ।
अयमोगघनंगमयमच्छ—
न निदाघस्य निशांतिकप्रवेशाम् ॥ ७८ ॥

निजमंगनिषिद्धतोयवृद्धि—
विद्धांशुकरकमधूलिरस्य ।
नृपसूनुरिवेव मोचितापं
व्यमुचद् धर्मजनंगमः प्रसूनम् ॥ ७९ ॥

विरहज्वरदाहधूमरांगी
पथिकश्वासपरंपरेव दृश्या ।
दिशि दिक्षु दृशादि मेघरेखा
नवमालेऽपि घर्मकालभंगे ॥ ८० ॥

गगनाङ्गनतः कलुषेषु मेघा
धनुरिन्द्रभुजगस्य घर्मनाशम् ।
घनपूजमनोमिलापनेषु
पृथुहस्ता इव दिग्गजेन्द्रहस्ताः ॥ ८१ ॥

प्रणयोऽभिनवाभ्रयाकमुक्ता—
विरमनकृद्ध विरागवृत्तिमग्र ।
सगन प्रतिशोभमवप्रवृत्ता
इव शुभ्रकान्तिरत्नः प्रांशुः ॥ ८२ ॥

अद्भुतोऽरुद्ररवरुद्धांगुपाला
पृथुलाभ कलापिभिः पृथिव्याम् ।
शिखिनागगतापनिरूपमं—
स्फुटकुड्मलानि जानि मुग्धलानि ॥ ८३ ॥

कलुषा मर्मीन्नाम्बरं पृथानाः
पृथनाना कलुष प्रभावाणं च ।
न मनोनिर्विनरता न वधू
[illegible] गगनपृथायत वीणाः ॥ ८४ ॥

[illegible] पृथुरभ्रपरागराशि [illegible]
पवना [illegible] ।
[illegible]
[illegible] प्रसूतं ॥ ८५ ॥

विकरेन [illegible]
[illegible] ।

पथिका मरवो मति यथंधुः
स्फुरदुद्दामतडिल्लतंकरंध्रम् ॥ ८६ ॥
परितापहरं पयःप्रफेनं
प्रहलन्पानमनेकभूरिधारम् ।
स दुदोह महीविपृक्तये गाः
समयः पीनपयोधराश्रतघ्न ॥ ८७ ॥
विरहानहनादिवाशुपादे
मुहुरापर्यंति पर्वताचलीनां ।
पतिमभ्युपरापगाः प्रवेगा-
द्दरीहस्तगृहीतपूगपात्राः ॥ ८८ ॥
स्मरतोमरतीत्रभेदरौद्र—
ध्वनिता विप्रांतकांतलोपज्ञाताः ।
स्फुरदसिशिखा इयोहिरंत्यो
घनकूटानि तडिल्लताः प्रसस्नुः ॥ ८९ ॥
घनिताहृदये तमोमयीभिः
रजनीभिस्त्रिकया मनोमयाग्नेः ।
उज्वलितस्य गर्भरियाग्निपांशु—
स्फुलल्लीलामन्वय. समुद्रभुवः ॥ ९० ॥
विरमत्पुरुषाभिनीतधन -
श्रयणाता घनकालपातलोया ।
गृहदेवुरमुच्यमानपाथ
पृथुधाराः परिकीलिता इयोत्यांम् ॥ ९१ ॥
अचिरप्रुतिरलकर्पमर्द-
रिव कालेन विभिद्य स्वायमानं. ।
करघे व्यथया विपन्नमानं-
मुंमुचे भूरिजलं भृशाकुलार्दं ॥ ९२ ॥

कमलाकरमूर्जितप्रसारं
रसिकं संप्रविमुच्य मुग्धमत्स्यैः ।
अनिशं [illegible] भूवे
[illegible] विरमग्राहम् ॥ ९३ ॥

[illegible] महानभोगे-
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] न केतकी फलानि ॥ ९४ ॥

[illegible]
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ ९५ ॥

[illegible] —
[illegible] ।
[illegible] —
[illegible] ॥ ९६ ॥

[illegible]
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ ९७ ॥

[illegible]
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ ९८ ॥

१ [illegible]

जलदागमनोचितैस्तु सौख्यै—
र्युवराजं प्रमदासदोनिषण्णम् ।
रचितांजलिरित्युवाच कश्चिद्
वचनं हेतिगृहे कृताधिकारः ॥ १०५ ॥

स्फुरदर्चिरुदग्रदीर्घलेखा—
प्रकराक्रांतनभस्तलाद्य चक्रम् ।
प्रविशाज्जरदेव ! शास्त्रशाला —
मदमद्राक्षमरातिदुर्निरीक्ष्यम् ॥ १०६ ॥

अमरैः परिवीक्ष्यमेतदुग्रे—
र्मणिमौलिस्फुरदंशुचित्रलेखैः ।
प्रयदद्भिरिव प्रमोदहेतून्
गुरुपापाम्यपहस्त्य वारिदेभ्यः ॥ १०७ ॥

जननाथ ! रथांगतो वियोगात्
इव पापं प्रविमुच्य मुक्तशाम्याः ।
मिलिता घनदम्भतो धनांते
पथिकप्राणहराग्निरोमयंति ॥ १०८ ॥

पतितेव विधेयवर्णनीय —
स्तव हेतिस्त्वमुपागते रथांगे
प्रविमुक्तनिशाविहारवृत्ति—
र्यमुना पंकिलतामपोहतीयम् ॥ १०९ ॥

परिहेतिमयूखमीरदृष्टं
गगनक्षेत्रमिदं प्रगल्भितोयम् ।
तव देव ! पताम्बधान्यवीया—
मिव पर्यंत विभाति ग्रामहंसान् ॥ ११० ॥

---

१ जलधरे । २ दृष्टांपि । ३ चक्रे । ४ भीष्मभेरपि ।

पंचमः सर्गः ।

देव ! प्रयोदय परेऽपि परोपताप—
काले प्रभावमहिमोदयहेतवस्ते ।
अन्यागताः सपदि चक्रधरस्य चक्रं
कुर्वंति रत्ननिधयो विविधांगलक्ष्मीम् ॥ १११॥

यातं दिग्विजयोद्यमस्य शारदं दिव्याखिलक्ष्माभृतां
चेतोऽजरणप्रभावमहितं चक्रादिरत्नागमम् ।
तस्यैवं सुयतः प्रमोदविकसच्चेत्रोत्पलश्रीर्नृप—
श्चक्रे नैकमहद्धयस्तुनिवहैस्तृष्णाकुटीपूरणम् ॥११२॥

इति श्रीवादिराजसूरिविरचिते श्रीपार्श्वजिनेश्वरचरिते
महाकाव्ये यज्ञनामचक्रवर्तिचक्रप्रादुर्भावो नाम
पंचमः सर्गः ।

षष्ठः सर्गः ।



विधिप्रसिद्धां प्रविधाय पूजां
चक्रस्य चक्री स यती यतेन ।
क्रमेण दिक्चक्रजयाय जिष्णु—
र्जगाम कामार्चितजीवलोकः ॥ १ ॥

अरातिभूपालसमूहभीति—
स्फुटस्मरशैलरयस्य शंकाम् ।
व्यधत्त पुंसां नरलोकभर्तुः
प्रस्थानशंसी पटहप्रणादः ॥ २ ॥

जिनेश्वरागारमर्चनपुण्यतंदुलैः
समं स दिव्यं जिनशासनद्विजैः ।
महर्षिमालाविचलं समग्रहीत्
भवंति भव्या हितवस्तुवेदिनः ॥ ३ ॥

लावण्यपल्लवभृतो सुवर्णकर्णांका—
स्मांगल्यपूर्णकलशानिव पार्श्वयोसाः ।
आविष्कृत्य पथुर्वामनासाकीर्ति
कार्णस्याच्छविकपाल्पुत्रान दधाना ॥ ४ ॥

कांम्बोजाद् दृश्युन्नगामी
स्वमासेतुपि सत्र पार्श्वयाकें ।
अमवन् सुमहोदयः पुरस्ता—
दनुगामोत्यगणुपमत्वरिष्टः ॥ ५ ॥

अनेकदिग्भेदविदर्भवित—
मार्गोन्नदार्गातिशयप्रत्यम ।

१ [illegible] । २ [illegible] ।

षष्ठः सर्गः ।

प्रभापितल्लग्न मयाद्दिपाये
पार्श्वं प्रभामाति चचाल भीमम् ॥ ६ ॥

जयप्रभावेन नृपस्य तेजो
निषेव्यमानं निगिलासु दिक्षु ।
उल्कापदुलेनादिनभूपतीना—
मुत्पादयामास विलोचनानि ॥ ७ ॥

छत्रच्छलेन सुचिरादमरप्रमुख—
रत्नप्रभामुपरि चक्रधरादमोदुम् ।
एकांबरानुगमबंधुनयेव भानुं
छायासुधामधुरमापुनमभ्यरक्षन् ॥ ८ ॥

ऋतुयकलया पिशंगकर्णां
प्रकृतिस्थूलतलां च दंडवज्रीं ।
क्षितिपस्य निदेशकाम्ययेया—
वल्गामपरां मिथोऽधिरूढां ॥ ९ ॥

तस्य पार्थिवपतेरभिरामं
चामरं प्रचलितं हिमशुभ्रं ।
कायकांतिविभयामृतसिंधो -
र्वीचिविभ्रममदं व्यदधाताम् ॥ १० ॥

निष्टप्तहाटकरुचिः कटकावभासी
सोच्छ्रायमूर्तिरतिलंघितसर्वतेजाः ।
रेजे स रत्नमुकुटेन यथा सुमेरु—
स्तारागणेन शिरसि प्रतियुंजितेन ॥ ११ ॥

सकलवसुधानाथे तस्मिन् जयाय दिशां तदा
चलति तदरिप्रांताधासप्रधानरतागसः ।

...जिघामदानादपराधा ।

त्रिशालवेश्मन्य पुरन्ध्रिया कुमा
    महर्द्धे पाराण् मणिनूपुरस्वरान् ।
अयाचिभृत्यः शुभगाः पुरोभवः
    [illegible] ॥ २१ ॥

[illegible]—
    [illegible] ।
[illegible]
    [illegible] ॥ २२ ॥

[illegible]
    [illegible] ।
[illegible]
    [illegible] ॥ २३ ॥

[illegible] –
    [illegible] ।
[illegible]
    [illegible] ॥ २४ ॥

[illegible]
    [illegible]
[illegible]
    [illegible] ॥ २५ ॥

[illegible]
    [illegible] ।
[illegible]
    [illegible] ॥ २६ ॥

१ [illegible] ।

षष्ठः सर्गः।

मायूरपिच्छरचितोष्णमहातपत्र-
च्छायावृतैस्तुरगमागधदत्तवर्गैः ।
अंदोलकैः सुरभिचंदनदिग्धगात्राः
केचिन् सुखात्सदशः प्रययुर्महीशाः ॥ ३१ ॥

वस्तुवार्तनिवहं प्रतिपाद्य
प्रीणितेन विजयागमनेन ।
सप्रयोजनकृतस्मह नम—
मंडलाधिपतयः प्रविचेलुः ॥ ३२ ॥

पार्श्वैः स ददृशे भयार्तुप
ग्रामयोनिभिरुपेत्य चक्रभृत् ।
पेसनैः सुरभिशालितंडुल
स्तोमहेमनिचयातुपायनैः ॥ ३३ ॥

केचिदंबरपथानुसृद्ध्रो वा—
नातपे व्रजत घर्म दवीयः ।
दीर्घिकानटभुवः सहकारा
विश्रमाय पुरतोऽपि भवंति ॥ ३४ ॥

तीरे भूरिद्रुमवति वधूबंधुभिर्भोजनांते
विश्रांतानां क्षणमनुचराः पद्मिनीपत्रगूढम् ।
अंभः शुभ्रं सघिमचलयं पद्मजालं सनालं
ताम्यत्यांतां पथि घनघनामाहरन् दीर्घिकाभ्यः ॥ ३५ ॥

मृहदंटाघाघा. पृथुलचलांगा वलयभू—
ढिग्याणा. सिंदूरच्छविरचितचूडाहढचलाः ।
वराहालंकारा ययसभरमूदा क्षितिपतेः
न कत्ता हो वल्यावकस्यापि तत्क्षणे सेनार्णवे ॥ ३६॥ (?)

(नेति चलाति चक्रधरप्रभावः।)
पुरस्तात् प्रस्थानां पट्टमुमुकसेनायुधमया—
घनेंडुप्रारंहो रणशिरसि दंडो विजयिनः।
व्युदस्य स्वस्थानादनयननमुद्धंमु महतो
द्विमेदान्यश्चेमां स्फुटमयनतेषु क्षितिभृतः ॥ ३७ ॥

चक्री स एवं वसुभिः प्रयाणै
रक्तांमगादुद्धतभंगकारी।
हंसावलीनिस्स्वनमुग्धयाचा
तस्यैव सा स्वागतमभ्यधत्त ॥ ३८ ॥

भंगोच्छलच्छिशिरशीकरजालमस्त्र—
किंजल्कपिंजरितमघंधियेव बिभ्रत्।
अभ्यागतं क्षितिपमभ्युदयाय वायुः
सिंधोः स्फुटध्वनिमधुव्रतडिंडिमौघैः ॥ ३९ ॥

प्रोल्लसत्कमलमुन्मदेभमु—
ल्लोलहंसचपलध्वजं जलम्।
चक्रिणश्च बलमत्युदद् ययौ
विक्रमादुभयतो नदीतटम् ॥ ४० ॥

स्फुरन्मणिशिलातले सुरभिवल्लरीमंडप—
च्युतप्रसवचासिते मरुति वाति नद्यास्तटे।
प्रियाधरमधु श्रमादिव निपीय मार्गागता
विशश्रमुरिलेश्वराः सुखनिमीलिताक्षाः क्षणम् ॥ ४१ ॥

यावदिष्टमिनरेतरपुष्टि—
स्पर्द्धयेव मधुरः फलवर्गः।
चक्रवर्तिकटकाय विभेजे
तत्पदीमणितटद्रुमखंडैः ॥ ४२ ॥

---

१ श्लोकादधिकं प्रतीयते. २ नदीम्।

क्षितिपतिमयलोक्यैयागतं दिग्जयाय
स्वयमधिकमयोक्ता वर्त्मयुक्ता च रक्ता ।
स्फुटमित इत यहीत्यावदंती शकुंत—
ध्वनिभिरिव पुरस्तात् गच्छ गच्छेत्यगच्छत् ॥ ४३ ॥

आसीदरसकलजनोत्सवेन गच्छन्
भूलाधरनुनदि रम्यवर्त्मनैयम् ।
उद्योगल्लगितमनाः स चक्रवर्ती
शीतोदानिकटमगाद्‌गाधवीर्यः ॥ ४४ ॥

तस्मिन्नद्युस्यपतिनिर्मितमूर्मनुग्र—
प्रासादमालि नगरे नरलोकपालः ।
गच्छद्भिरेव कृतविस्मयमालुलोके
साट्टालशालमणिगोपुरमुत्पताकम् ॥ ४५ ॥

विमज्य सेनापतिपारिपार्श्विकाः
परिभ्रमंतो भूमयंत्रायण्यः ।
परीत्य चक्रेश्वरधाममंदिरं
नियासयामासुरिलातलेश्वरान् ॥ ४६ ॥

अप्रध्यायिनकलाकरमौयिदक्षे—
र्धत्कारितेषु नृपु शिल्पिविशेषभाजः ।
विद्युल्लता इव घनादवतीर्य यानात्
देव्यो यथास्वमविशन्नृपमंदिराणि ॥ ४७ ॥

कश्चिन्तुरंगमनताः स्वयमप्रभूत्वा—
दम्यर्थितैस्तु दयितैरवरोप्यमाणा ।
भीत्येव चावकुचपीडितवक्षसस्तत्—
कंठेषु गाढविधिवाहुलता बबंधुः ॥ ४८ ॥

---

१ सहिता ।

आश्लिष्य कंठमवरोपयतुस्तुरंगात्
कांतस्य तच्छ्वसिति काचिदवोचदेवम् ।
स्पृष्टा नु मच्चरणयोः कठिना धरित्री
पीडां तनोति तव तन्मयमेव शय्याम् ॥ ४९ ॥

गलद्ग्राहक्लेशा व्यजनकमलस्पर्शमुदिता
दवीयोऽध्वश्रान्ताः क्षणमनयरूढा हयकुलात् ।
विपर्यस्तन्यस्ताभ्युधिनिभनरस्थाजिरगतां
यथास्थानं सेनामभिनिविशमानां क्षितिभुजः ॥ ५० ॥

[illegible]
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ ५१ ॥

[illegible]
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ ५२ ॥

[illegible]
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ ५३ ॥

[illegible]
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ ५४ ॥

[illegible]

मणिमयतटभित्तौ तीव्रवेगाभिघातात्
ध्वनति वधिरिताशं निम्नगायालवाले ।
विधुतगलवृहत्कं बृंहितं दयामशैलाः
प्रतिरवमिव चक्रुश्चक्रिसेनागजेन्द्राः ॥ ५५ ॥

आसन्नमस्तमयमात्मन एव दृष्ट्वा
वक्षस्थलादिव भयस्फुटिताद् गलद्भिः ।
रक्तैर्विलिप्त इव पाटलितो बभूव
वृद्धो रविः करधृतद्रुमदीर्घशाखः ॥ ५६ ॥

जनपतिरथचक्रनेमिवाजि—
व्रजखुरघातसमुत्थितः प्रलेपम् ।
धृषमयदरज्यत प्रतीची
यदधिकरक्तपराद्रिधातुचूर्णैः ॥ ५७ ॥

गिरिपृथुलकुचोपगूढमास्वद्—
विटपुरुद्धविलासिनीव संध्या ।
कवलितपृथुपयोधरीप्रभाया—
द्दिव परिपाटलदर्शना बभूव ॥ ५८ ॥

कृतसमयमसंगं प्रेयसीस्वयंसोढुं
तदनुगहृदयत्वादक्षमाश्चक्रवाकाः ।
विविशुरिव विषादादुज्ज्वलन्तं कृशानुं
प्रसृतकपिलसंध्यारागसंपर्कांगाः ॥ ५९ ॥

आरब्धहंसमधुरध्वनिजाप्यमन्त्र—
स्तत्कालकुड्मलितपाटलपद्मपाणिः ।
अंभःशुचिर्विपलनाचितनोपवीतः
संध्यामिव स्वयमवंदत पद्मखंडः ॥ ६० ॥

---

१ भवम् ।

उपर्युपरि पारिन्द्रैरपरपर्यंतं भानुमत्—
मन्त्रेगन्धकेतुपरिष्ठितकोटिदीर्णोदरैः ।
पिनुद्धजलबिन्दुभिः सपदि मुच्यमानैरिव
[illegible] ॥ ११ ॥

अनुगतमकरन्दप्रभामणीनां
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ १२ ॥

[illegible] प्रयातो
[illegible] ।
[illegible]—
[illegible] ॥ १३ ॥

[illegible]
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ १४ ॥

[illegible]
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ १५ ॥

[illegible]
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ १६ ॥

[illegible]

षष्ठः सर्गः ।

अभिमतकृतसंविदं प्रदेशं
बहलतमोपिहितेऽपि राजमार्गे ।
मनसिजजनितोपदेशदक्षा
स्वयमपरनैरभिसारिका प्रजग्मुः ॥ ६७ ॥

हतविपुलटालीव्यथया भीलयामा
त्रिभुवनपदमदंधकारेऽपि जाते ।
निशि विटनिपदो मल्लिकामालधारी
भ्रमरपटलनिर्यासकोलाहलेन ॥ ६८ ॥

विकचकुसुमदामोदामगंधानुबंधि—
भ्रमरकुटिलमालाकेलियाऽऽडंबराणाम् ।
स्वनितमपरनम्य स्फारदीपांकुरेभ्य—
स्तमस इव विर्माण्या यत्नरेखा विरेजे ॥ ६९ ॥

शिलीमुखानां घनतामितस्ततः
सुगंधिमाल्यप्रथितासु वीथिषु ।
निशि स्मरस्येव निशम्य हुंकृति
मुहुर्मुहुर्दयितावियोगिनः ॥ ७० ॥

आक्रान्ते सति नभसा नभस्यपारे
बभ्राजे मणिरुचिमंडलेन रात्रौ ।
आर्द्रोदरमथ वणिग्वेश्म यद्वत्
कालोदस्तुरगवधूमुखानलार्चिः ॥ ७१ ॥

१ बहलतमोपिहिते अन्धकारेणाच्छादिते । २ मनसिज कामदेव ।
भ्रमराणां द्विरेफानां पटलं समुदाय तस्य निर्यान निस्वनं तदेव कोलाहल
स्तस्तेन । ४ दामा इव । ५ शिलीमुखानां भ्रमराणाम् । ६ दयित
वियोगिन विरहिण । ७ आक्रांते व्याप्ते । ८ आर्द्रं श्यामं उदरं
यद्वत् । ९ वडवानल प्रवृद्ध इत्यर्थः ।

विमुख इति विवेकी नेति दुर्वारदर्पा[1]—
वह इति वरहारीत्युद्धतश्चेति नित्यम् ।
कमलमुखितवाराद्वक्षसश्चेद्वराकः
स कथय कुचयोस्ते किं न ते संति धर्माः ॥ ७२ ॥

पीडासहं मधुरमव्यतिरिक्त[2]राग—
मावद्धचुंबनरुचिं रतिनाट्यरंगम् ।
तं चेन्न वांछसि मुखान्वितवस्तु नाम
विस्तारमृच्छति गुणस्स तवाधरेऽपि ॥ ७३ ॥

निर्मलश्रवणसंगमनंगो
बृंहणच्छविमतुच्छविलासम् ।
कांतमाक्षिपसि यद्युत्पलं
किं न ते तरुणि तादृगपांग ॥ ७४ ॥

स्वभावमलिनस्थितौ श्रुतिरहेतुवक्राकृती
भज स्वरसगंधतृप्तमधुपे सतामाश्रयः ।
निवृष्टरतिनिग्रहे सरति भावकः स्निग्धया
घटेत यदुपेक्षते सुदति केशवेषे त्वया ॥ ७५ ॥

किमिति तरुणि तस्मिन्नंजनन्यासमन्यं
रचयसि तव सिद्ध्येदन्यथा कामसिद्धिः ।
न हि तव मृगनेत्रे नेत्रगर्भस्थितः स—
न्नपि भवति निमित्तं त्वन्मुखश्यामतायाम् ॥ ७६ ॥

शुचित्वमपि तस्य विद्धि वचनान्मम प्रत्युत
स्त्वमेव सुभगे श्रुतिः कुचभरावमर्शोचितम् ।

---

१ दुर्वारदर्पं वह दुर्वारं निवारयितुमशक्यं दर्पं गर्वं वहतीति ।
२ अव्यतिरिक्तं अपृथग् रागोऽनुरागो यस्य तम् ।

यदुदर्शनि यहसा मणिरदानमध्यस्फुरन्—
मयूखमुखचुम्बिताधरमसौ कान्तसंबंधिनी ॥ ७७ ॥

इति सखि वपयेव तमोमुचा
युवतिरागमयती दयितागमे ।
अथ न पुष्टिमधिज्यशरासने
निशि सर्पगते कुसुमायुधे ॥ ७८ ॥

दयिता स्वर्गागपि विगृह्य वधू—
रतिवल्लुंठन नयनेऽधिनिशम् ।
दयितस्य च द्रुतमनागमना—
दमिमीलदंगुलिपिनेव दृशौ ॥ ७९ ॥

तामाभिषंगमतिपात्य रतस्य कालं
याता प्रियस्य निशि कान्तिदुपस्थितस्य ।
क्रोधोदयादनुनयाद्यपयापयंती
पादप्रदानमहनोगपि पापकांतम् ॥ ८० ॥

आगता प्रतिनिवृत्य वेश्मनो
वल्लभस्य निशि साभ्यसूयया ।
कांतयंति नवमोगलाञ्छना
संफलीयवचनमभ्यधीयत ॥ ८१ ॥

हंसत्वं दूति यदायथोरविविधसखापि मत्प्रेयसी
तन्मउयं प्रतिपद्यमत यदयं मद्दृदयं व्यधात् ।
प्रस्यन्दार्द्रमुखं नवक्षतमुचं निर्दिष्टदन्तच्छदं
तांबूलांकविलोचनं नय रतिव्यत्यस्तवलं वपुः ॥ ८२ ॥

---

१ अधर निर्गच्छन् एव स्फुरन् दीप्यमाना ये मयूखा किरणानि तान
मुखानि तैश्चुंबितमधरं दलच्छदं येन तम् । २ तमोमुचा चंद्रेण । ३ अधि
मारोपितं शरासनं धनुर्यस्य तस्मिन् । ४ अतिचापल्येन । ५ नव च तत्
दस्य लाञ्छनं चिन्हं यस्या सा ।

घनतमसि निवासे सन्निधाने सखी मां
युवतिरधरचिंचे चुंब्यमाना प्रियेण ।
उपनतरतिलोपं दीपमुद्दीपयंतं
परिजनमुदितेर्ष्यारूक्षमीक्षांबभूव ॥ ८३ ॥

घनितान्श्लथनीविखंडवासा
शिशिरंभःस्नपिता भियेव शीताद् ।
वृणु मां वृणु मामिति ब्रुवंती
शयनस्थं परिषस्वजे स्वमीशाम् ॥ ८४ ॥

योजयन् जघनमंडले दृशौ
वल्लभः प्रमदया विधस्मया ।
संभ्रमर्द्धुषमरायनुद्धय--
क्षस्थला युवतिरपीत्यताधरे ॥ ८५ ॥

अनुनयकृतियत्नभे कृताग--
स्युचितमिवाययती जगाम लज्जाम् ।
अनुनिशमभिमानबंधभंगा-
दिव युवतेर्दिनाधिलीनमूव नीवी ॥ ८६ ॥

रागी वियोगममहद्धिय गाश्रिमिंदु-
मुक्तां मुहुर्नमथनीमथितप्रदोषम् ।
तस्याः प्रसादनमिर्थणकमुखरता--
मन्वेष काम इव गोधरमण्यतेहन् ॥ ८७ ॥

हिमांशुरुयत्पतगचक्रथालं
दीपोत्तमार्थीरपरत्नदीप्तिः ।
सुधो भृता यं स्वयमन्वियाय
प्रभामियोर्द्वीपिनुमुन्धिनम्न ॥ ८८ ॥

१ दन्तक्षमुखता । २ मृषवर्णन- । ३ शेषनामिर विथनरमस ऐशिरव कंठिरस्थैर्ये उरसिनखानि ।

पिशंगमौलिः स्तनुते हिमांशो—
र्बिंबं गिरेः शृंगमिवेषि रात्रौ ।
तत्कालरागाज्यकृते स्वरूप
प्रापोदयस्येव सुवर्णपीठम् ॥ ८९ ॥

मदापदारभ्यकोरकेभ्या-
मुद्गारयन् ध्वांतविमारिपानः ।
निशाभिसारिलिंगितुमंगनाभी
प्रसारयामास करान्मृगांकः ॥ ९० ॥

मुदं मृदिम्ना जनयञ्जनानां
वैरंधिरं मंडलमारुरुक्षुः ।
राजा मयोनोऽपि विलिख्य काष्ठा-
मध्यास सौधोदयमद्रिनीयम् ॥ ९१ ॥

दृढतिमिरमयव्योमगर्भावकीर्णा
विरलविषिकर्मिद्योदमयः कुंरमुखः ।
सदसि हसविवियोगाद्यतमात्रावयवोऽपि
विलनमृदुमृणालीविभ्रमं विभ्रते स्म ॥ ९२ ॥

आर्तीप्यदमृतगुलिर्विदलिताननासुच्छन—
सरगतायनां दानैः कुमुदिनी विमलांबरः ।
करग्रहसमर्पित नवसुधारसं सुंदरी—
र्युयापि मधु मानयो दयितहंसमूलाश्रयः ॥ ९३ ॥

अभिनवरचितमात्मनि प्रसक्तां
स्मरकर्मामिद्वदिशः स्वयं धवरया. ।
धरचैयक इयोत्पलीविनुदे –
हिमरुचिरंकभृदावमाधदस्रः ॥ ९४ ॥

---

१ मृग अंके क्रोडे यस्याम् इदुरित्यर्थः । २ रमाविवेणात् जलराहित्यात्
३ धेनुमयमित्यर्थ. ।

[illegible] —
[illegible]।
अनेक[illegible] —
[illegible] ॥ [illegible] ॥

[illegible]
[illegible]।
[illegible]
[illegible] ॥ [illegible] ॥

[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible] ॥ [illegible] ॥

[illegible]
[illegible]।
[illegible]
[illegible] ॥ [illegible] ॥

[illegible]
[illegible]
[illegible]।
[illegible] ॥ [illegible] ॥

[illegible]
[illegible]।
[illegible]
[illegible] ॥ [illegible] ॥

[illegible]

करांधयन्तो दूरपथप्रयाणा—
दिव श्रमार्ता निशि चंद्रपादाः ।
संभूय मंदागतमारुतायां
विशश्रमुः स्थूलपृथुनितंबाः ॥ १०१ ॥

स्मरस्य संगामलतल्पकदा--
मंद्रातपे धुंचति पंकजिन्याः ।
आनंदयोगादिव सानुरागा—
न्यमीलयन्नंबुरुहोचनानि ॥ १०२ ॥

मुखानि मंथामविलोचनानां
प्रदानलोष्ठ्यामभिनंदमानः ।
बभूव रागादिव पीतगन्धा
मृगांकरश्मिप्रभवो निर्धेतः ॥ १०३ ॥

लीलाविलोलनयनोत्पलभृंति संत्य
धूर्ते शशांकरुचिसंति मदोपकंति ।
कामातुरा युवतयः स्वधरंप्रभृति
मान्यं सुखानि रमणानि पुनर्युवानः ॥ १०४ ॥

अदेश्य भूनि मधुनि स्वकामिति
ध्यतर्कयत्काचन कर्कशात्मनी ।
अहं निर्पानास्मि किमंग हालया
मयैव रागात्पनिपासितस्त्वया ॥ १०५ ॥

अतिपानविधेर्मृस्तुमेका—
प्रियमुद्रामसुगंधिकापि नैव ।
अधरप्रतिनिर्णयदर्शनेन
स्पृहयालुं विदधे पुनर्विदग्धा ॥ १०६ ॥

---

१ प्रासादपंक्त्याम् । २ अपिबन् । ३ सुरया ।

हरिणदृशां मुखैः सह निशोदितशीतरुचिर—
फलदंफल्गुबांधवमभीभिरमा ।
यदयं मणिमयभाजनस्थमदिराम्बुनवारि
मिलदलुठदनल्परागसुहृदिप्रतीविगतः ॥ १०७

ध्रुवं वधूवल्लभकंठगह्वरा—
द्विहीनहालामदशक्तिरुद्गता ।
विमोहनं देहभृतां व्यधत्त—
स्सरस्वती गीतमयीभुवि गता ॥ १०८ ॥

दृढतरपरिरम्भणच्छलेन यूनां
कुचभरमुद्वहतामिव प्रमदाः ।
अधरमधु ननसुयो विवेनु—
स्तनुतनयम्नगुमध्ययोरहेतुम् ॥ १०९ ॥

वधूपराग्मधुमदनि ल्प्रियः
स्मरं मुदा भरतरम्यकियागुरुः ।
अयोजयन्निधुवननृत्यकर्मणा
समुत्सुकभ्रूगरुलालयोजनः ॥ ११० ॥

अविदित्ददम्यामदना प्रयत्नाः
प्रस्वेदतोयैः पुलकायितेनु ।
वक्षांसि पङ्कजाम्तृयुं भङ्गुरं
मूर्तैरिव प्रेमरसैः प्रियाणाम् ॥ १११ ॥

रतिक्रियायामशिक्षपूर्ण—
स्त्रीपुंसवल्लीलायकंठनामराः ।
अन्यविकोर्णैव समं स्वहस्ता—
स्त्नाङ्गसिद्धार्थिनि चचारैः ॥ ११२ ॥

जलमथ निरवि चिन्तो मृगाक्षी
मदनकरो हृदयस्यापुं मनुष्यः ।

शीतरश्मिरभिवमानयाना—
गुपरि सुधामिव चंद्रिकां मुमोच ॥ ११३ ॥

दीर्घप्रसारितकरेण गुहागृहेषु
संप्रीडनार्थमिव चंद्रमसा विसृष्टा ।
जारेण गमितरताद्रिमिवाय सुप्तं
सुप्ते जने सुमटे पश्चिमवेलामकन्या ॥ ११४ ॥

उन्मुच्य तस्मानंगुरुमगुंच-
शंजानमानविनयात्मजीवकम् ।
अन्यगतामां श्रवणानुयानीं
मदनलोकत्वमनु प्रनरयं ॥ ११५ ॥

सरदं हि भूतोलमगमनोभू—
रभिगम्यवपरां सुधारधामा
यदनं स सुधागृदामसुम—
प्रमदानां जघनानि यत्नरोधैः ॥ ११६ ॥

गाढरतिपंकतया सुरतिक्रमेण रतिभिर्यनिता ।
परिरभ्य दृष्टमधुरोष्ठमणीर्निभृतं भितापरिचितां सुषुपे ॥११७॥

गृहेषु गावामयरक्षणार्थं
निद्रानुरोधेऽपि चिराभियोगात् ।
पुरःसरंकण्ठनिम्नस्वराणां
समुद्रभुत्तुंगपरप्रघोषाः ॥ ११८ ॥

अध्यांतयातसरसीरमलोमसंधि—
भृंगस्वनैरिव सुखप्रतिबोधभाजः ।

---

१ वर, मृग च । २ वारुणी सुरा, उत्तरदिक् च । ३ न लभ्यो मार्गो य
तदमार्गानुयायीत्यर्थः । पक्षे न लभ्यो मार्गो येन स्वमार्गानुयायीत्यर्थः । ४ प
इन्द्रियसमूहेनेति शेष । ५ निरंतरप्रवाहितस्येत्यर्थ ।

आलानधामदृढशृंखलदन्धशाब्दाः
शय्यां विमुच्य शनकैरगमन्गजेंद्राः ॥ ११९ ॥

शिथिलय कलकंठि कंठदेशात्
भुजवलयं ललिते ! मम क घस्त्रं ।
परिणतिमगमन्निशा यदेताः
शकटरवैः श्रवसी तुदंति रथ्याः ॥ १२० ॥

संभूय संभृतलयाः प्रवदंति ताम्र--
चूडाः मनीडरतयस्तदहं व्रजामि ।
तन्वंगि यन्मयि समाश्रितभूत्यभूये
भूयः प्रमादविधिरेव विधापिनीह ॥ १२१ ॥

विध्वंसात् प्रियतमसंगमेऽपि चेतः
सर्वस्वं त्वयि रमतो ममान्यथापि ।
आनेयं मम पुनरप्यदो निशीथे
तत्स्थेम्नागृहमिदमभ्युपेहि मा वा ॥ १२२ ॥

येनोगृहीर्विपुलविलासद्रागरत्नायतंसा
माऽनो योगानियतजहिम । न प्रणीशं तनोति ।
भोगिन् क्रीडाकुलान्मथना यमुपेत्यंत काले •
व्यालव्याया विरचयति मे पुःस्वरोपं मनोरम् ॥ १२३ ॥

इति विटकुलटाजनस्य जंत्र—
स्मरशास्त्रीनिकरे वियोगभारे ।
उपनयति रात्रिपर्धिमाने
प्रणयगुणर्यंघमकमो बभूव ॥ १२४ ॥

आलिंगनोऽङ्हनसंडुल्लिंगु कांतैः
कांतानुचेष्टनवकाशानयेव नार्ना ।

---

१ मृत्स्नं ।

सौरभ्यं प्रणय कमलेषु निशावसाने
मन्दोऽनुयाती पुनरम्बुजपङ्कमलश्रीः ॥ १२५ ॥

चिरविनिर्मलतारतोयकलैश्चकोरि—
नियंतुपारतलिकासु कुमुद्वतीषु ।
याते विधौ विधिवदुन्नतमोपयाने
शोकप्रलाप इव भृङ्गरवो बभूव ॥ १२६ ॥

हिमकणिकमये प्रसंगरम्यां—
बुधरि विदारिणि दूरम् प्रयाते ।
मकुलितकुमुदेक्षणा कुमुद —
त्यधिवसति स्म सरस्वतीवयस्याम् ॥ १२७ ॥

प्रियविरहविलोलोचनिभ्रान्तदाय
प्रसरमिनमुग्लव्योम चन्द्रस्तवर्त्मी ।
तरुणदिवियाटी दारुभालिरधाय
स्थविरमिव समीपं पश्चिमस्यार्णवस्य ॥ १२८ ॥

आलिङ्ग्य वासभवनं रविचक्रसंधि —
निद्रायिता विकचयांविजांघयंधा ।
धरेषु कुन्दमधुगुञ्जनवृन्तेषु
प्रासादिकं सरति याति विलासवस्यः ॥ १२९ ॥

समयमन परस्परेण दूर—
प्रसूननया निशि लब्धभोगपीडाः ।
यरयुवतिकुचा विभातकाले
समदमुपोऽनयस्य चक्रवाकाः ॥ १३० ॥

यात्रा दीनमयूखनीयभुजगादीर्घावितोद्धारिणो
अलिवार्कवियोगिनी कमलिनी निद्राछलान्मूर्छिता ।

---

१ गम्यमाने । २ प्रस्फुटितकमलमुखिवाहिनि ।

तस्मिन् कंधरकालखण्डमपि गते शोणाम्बुजानुंभन्मुखे—
ऽज्जृम्भतध्वान्तमयप्रभातमखिला लब्धेव संचेतनम् ॥१३१॥

ध्वान्तघ्नी निशि सरोरुहगेहगर्भा-
द्दोषाकरेण कुमुदाकरवेश्म नीता ।
भास्वत्प्रियस्य पुनरागमनात्प्रियेव
प्रत्यायिवेशा पुनरंबुरुहं प्रभाते ॥ १३२ ॥

[illegible]
यस्मिन् ध्येयं करावैवो त्रिधामम ।
[illegible]
[illegible] ॥ १३३ ॥

[illegible]
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] निशि [illegible] ॥ १३४ ॥

[illegible]
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ १३५ ॥

[illegible]
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ १३६ ॥

[illegible]
[illegible] ।

१ [illegible] । २ [illegible] ।

अभिनिवेष्टुमिवांगमनोरमा—
स्थितवती कमला प्रतिवीक्षते ॥ १३७ ॥

तेजस्विनः स्वमदशामृतमेते
ये प्रत्यया दधिपयप्रपाताः ।
भयादिव शांतिमयो यथोक्तं
कुर्वन्तु ते सर्वजनीनसिद्धिम् ॥ १३८ ॥

प्रस्वेदांबुलवान् मुखादपनुदन्नामीलयन् लोचने
मोल्लासामलकापटीं विधुरयन् संजन् नितंबस्थलम् ।
नारीणां सुरतायमानसमये कार्मीय कुर्वन्प्रियं
प्रीत्यै देव! तवानिशं प्रसरति प्राभातिको मारुतः ॥ १३९ ॥

तनुजिनपतिपादद्वंद्वका चारयेदं
विकसदलयमाने मानसे मम भूयः ।
स्वरलसरलवेलाः श्रंगलक्ष्मीविलासे
रयमयनिपतितहंसो हंसलीलां भजेयाः ॥ १४० ॥

इत्याविष्कृतपंचमध्वनिपदः श्रोत्रामृतं श्रीपतिः
पीत्वेव प्रतिपन्नबोधविभवो मंदारगतं पंक्तिनाम् ।
उत्तस्थौ शयनाद्विकीर्णकुसुमभ्रांतालिकांतारवैः
धन्नी प्रियमनोहरः स्वरविहारीत्येव फूत्कारिणः ॥ १४१ ॥

इति श्रीभावदेवसूरिविरचिते श्रीपार्श्वजिनेश्वरचरित्रे
महाकाव्ये यज्ञनामचक्रवर्तिप्रबोधो नाम
षष्ठः सर्गः ।

सप्तमः सर्गः ।



*नमो[illegible] [illegible] ।
[illegible]: [illegible]लोहितद्युतिः ॥ ८ ॥

[illegible] ।
[illegible] मंजीरमिव [illegible] ॥ ९ ॥

[illegible] इव कानने ।
[illegible] ॥ १० ॥

[illegible] ।
[illegible] ॥ ११ ॥

[illegible] ।
[illegible] ॥ १२ ॥

[illegible] ।
[illegible] ॥ १३ ॥

[illegible] ।
[illegible] ॥ १४ ॥

[illegible] ।
[illegible] ॥ १५ ॥ [illegible] ।

[illegible] ।
[illegible] ॥ १६ ॥

[illegible] ।
[illegible] ॥ १७ ॥

* [illegible]

चचाल चक्रिणधरणा चकितास्य चमूर्द्विषाम् ।
दिधियान्निर्गमे तस्याः कायेभ्यो निर्ययाविव ॥ १८ ॥
तेजोभिर्वपुषे तस्य सर्वदिक्षु प्रतिक्षणम् ।
आलिङ्गनादिपारिस्त्रीनिश्वासप्रसरोष्मणाम् ॥ १९ ॥
अहृद्यो परसंपाताज्जयमानांसनो भिया ।
गृध्नरेष्येयामयतस्य नूनं सेनापरिच्छदः ॥ २० ॥
सेनयाऽनूनया तस्य निपृष्ठोद्धतभंगया ।
सीतोदयेव सीतोदा प्रस्थानायनुरूपया ॥ २१ ॥
सीरद्रुमायतीडस्थान् श्यामयारिस्तंगिणी ।
उरगस्येव समायातमप्राशीन्मस्तवेशणा ॥ २२ ॥
तार्क्ष्यस्यपूर्वसंघातपातोऽथनुमुलध्वनिम् ।
मातेयप्राद्विनिर्घोषः श्यणोऽमपुनःपुनः ॥ २३ ॥
अलेभपुष्कगोर्द्धर्मीष्टसानुच्छच्छदाञ्जलैः ।
मयोयातंभितालम्य ध्वजाकर्तनिषिद्धया ॥ २४ ॥
पाल्यपृधे निपतत्यं तत्र तत्र मनोहरे ।
तस्यैत्यपूलपन् निधुर्भगमुखेरणाकुपम् ॥ २५ ॥
तीरपर्यन्तगर्जन्तोऽपतगागमरीचिभिः ।
पुरस्कृतानुरागेय निघ्नगा तस्य निर्बभौ ॥ २६ ॥
पेतर्ल्कतानमस्यापि भौगङ्गस्य पालिभिः ।
गुरुर्दृत्थ्यमानाय इपसैमां महानदी ॥ २७ ॥
तादृश्यगाधता तस्या मदस्येव यदीच्छया ।
द्विनाया यदि भिंभत्ता पजनाभरयोऽप्यसंः ॥ २८ ॥
तरपपर्णीपरस्ताताम—तः विमुच्यते । २९ ॥
मूपरे मपर्यानिर्व्या

१ उपर्याना ।

तद्दृष्टसमयोद्दीर्णक्रोधघूर्णद्विलोचनः ।
प्रोचत्कहकहाध्वानं प्रहस्येदमचीकथत् ॥ ५४ ॥

ईदृशी तादृस्यैव युज्यते साहसक्रिया ।
यशसैवार्थिनो नित्यं न प्राणैः प्राणभृत्प्रियैः ॥ ५५ ॥

विगाहमाना व्योमाग्रमद्य मत्कीर्तिवल्लरी ।
अनेनाल्पप्रकांडेन किं न खंडेन खड्यतेमम् ॥ ५६ ॥

तोमरप्रणिधेस्तस्य जलानिक्रमकारिणः ।
अमी रत्नविशेषाः किं नोपस्थानं प्रकुर्वते ॥ ५७ ॥

इति क्रोधोपहासाभ्यां यथार्थमेव भारतीम् ।
अभिजल्पंतमाचख्युरुत्तमन्ये ख्यातपौरुषाः ॥ ५८ ॥

इयमत्युज्वला लक्ष्मीर्यंयतः प्रथिताव्रतेः ।
सौदामनीव जीमूतात् कस्य शक्या पृथक्क्रिया ॥ ५९ ॥

व्योमेवाक्रांतविश्रांते यत्नाद् दुर्लंघ्यपौरुषाम् ।
हठाद्राकष्टुमीष्टे कः श्रियं चंद्रकलामिव ॥ ६० ॥

तस्य का वा भवेन्न श्रीर्यस्तु ते संगरोत्सवे ।
चंडदोर्दंडकंडूतिकंडूयनमरक्षमः ॥ ६१ ॥

अमर्त्यनिवहायार्थ्यवीर्यंस्यतेस्तवेदृशी ।
मानयानुत्तमे तस्मिन्नाक्षेपोक्तिरयुक्तिका ॥ ६२ ॥

अतस्सुभटसंमर्दलब्धविक्रमसिद्धयः ।
ईप्सितार्थक्रियासिद्धौ देव! प्रेष्यामहे वयम् ॥ ६३ ॥

वहलप्रस्तोद्दामधूमप्रत्यूहलोचनः ।
दूरादभ्येत्य दावाग्निं कातिकमितुमीश्वरः ॥ ६४ ॥

शुष्कांशुतलमात्रस्थग्राम्यत्तिमितिमिंगिलम् ।
करवाम यदीच्छा मे शीतोदाकुहरोदरम् ॥ ६५ ॥

---

१ मीनमकरनक्रचक्रादे ।

निरस्य नीरसं पारिशारमर्णवगह्वरम् ।
संपादयेम संपूर्णं तव देव यशोऽमृतैः ॥ ६६ ॥
मेरुमुन्मील्य भूगर्भान् प्रभावं तव शाश्वतम् ।
कीर्तिकल्पलतालंबस्तम्भमुत्तंभयेम ते ॥ ६७ ॥
अपारमाम्भसः सुभ्राः कलाद्राहत्य भावली ।
हारीकृतामिलाभिश्चं भूषयेम भुजान्तरम् ॥ ६८ ॥
धीरमित्यभिधायोर्धराकान्तविष्टलोपमा ।
अभ्युत्थुद्वर्तनका मागधानीकनायकाः ॥ ६९ ॥
प्रकोपताम्रया दृष्ट्या स्वकरवालमिपश्यत ।
प्रायोगाजनि संग्रामात् स भुवं निरलोहित ॥ ७० ॥
कश्चिद्वक्रमया दंष्ट्रा दृढमुष्टिनिपीडिता ।
कृपीटमुष्टिकमोर्वीन्थंधाय परिभ्रमम ॥ ७१ ॥
दृढज्याकपिकर्मण्या घोहृदं मत्कीर्तनम् ।
अयथार्थप्रयासाय दधुर्द्दंमियापरे ॥ ७२ ॥
रत्नसंपादितभ्रान्त्ये सत्त्वधामप्रवर्तिनः ।
पक्कशिरे भृशं दृशनेत्रा पालिता इव ॥ ७३ ॥
केचिच्छिन्नसंनिरता निशिताम दधत करे ।
प्रत्यासन्नरणप्रीत्या बभूवुर्द्विगुणा इव ॥ ७४ ॥
आत्मनः स्वप्रतापस्य परिघर्षमयोचित ।
महायतंजयद्रस्याद्वागाः केचिदितस्ततः ॥ ७५ ॥
कोपदाहोग्रहस्तर्शविनिमिमर्क्षाणामुरगमम् ।
अभिधिनमियोरर्थविपर्युधिमयं भटा ॥ ७६ ॥
आपतन्मधुपालंबताटिमदर्शिवदृश्ता ।
केचित्काण्डालयामासुरिव स्वं प्रभमीयमम ॥ ७७ ॥

१ ...नव । २ ...पुर ।

तं म्लेच्छाः सर्वभावेन समरेऽसमरे जिते ।
भग्नाः शरण्यमाजग्मुः पीडने पीडनेरिनाः ॥ १२५ ॥

समदर्शीप्रदानेन समदर्शी स संयुगे ।
मनुजः स्वामिनः स्वैरमनुजग्राह नाजय ॥ १२६ ॥

सेऽग्रो द्रविणमादाय म्लेच्छनृपालिम ।
आययौ स नृपोपान्तमनामद्रनशालिनम् ॥ १२७ ॥

शान्तोऽप्रणि गुहागर्भं स सद्यात्र नव सेनगा ।
अगाद्दशकथगन्धाला सुधिया स्वर्गसंनया ॥ १२८ ॥

निःसलेभ्या [illegible]
नव [illegible]

सा सेना [illegible]
सा सेना [illegible]

[illegible]

हृतनूर्यस्याक्रोशा पृतनाक्षोदपीडिता ।
पांसुच्छन्नोत्पपातेव स्वस्थानाद्द्रियदुर्धया ॥ १३७ ॥
सद्यो धावद्यो व्योम्नि जज्ञे धीरमुखरन् ।
सद्योवाद इयास्यास्तु संगरोद्गकारणम् ॥१३८॥ अक्षरच्युतकम् ।

अरीणामुत्तमांगानि निशितानतोमरैः ।
चिच्छेद निश्चयात्कश्चित् व्योमस्थैर्यविनतोमरैः ॥ १३९ ॥
तरवारिभृतः सर्वा वीराः कातरवारिणः ।
का निःकंपेति रे धावो भटैस्संपेतिरे परैः ॥ १४० ॥
अंतःशल्या वद्धागपाशसंनहनाद्वया ।
अनवद्या घनध्यानैर्वाणैः केचित् प्रजह्निरे ॥ १४१ ॥
अंतःशल्या दृढधागपाशसंनहनाह्वयाः ।
अनवद्या घनध्यानैः कीर्णाः केचित्प्रजह्निरे ॥१४२॥ अक्षरव्यत्ययः ।

अखैरिपुधियो गाढारूढरच्यन्यकेंहता ।
स धरिपु वियांगादकृशो ह्रस्याऽभ्यगुर्मुने ॥ १४३ ॥
विनिन्युर्मृधाचक्रं धरवारणवाजिनः ।
आहवे निहतास्साकं वृत्तया रथकथया ॥ १४४ ॥ अपवर्गः ।

निशितानिच्छिन्नमूलप्रदिरमो विषयं दशौ. ।
अरिमभ्यगुरुच्छत्ता. कबंधाः शौर्यशालिनाम् ॥ १४५ ॥
असहिष्णुतया युद्धं विलातायसंमूभृत. ।
पूर्वमापादधस्यानामर्हीन्द्रानतुमकम्मरः ॥१४६॥ अकवर्ग

अमां मेचमुवा व्योमव्यामयारिमहारथम् ।
वर्षपुंचिपुलोच्छाया गिरिडंबरगोपकम् ॥ १४७ ॥
विकीर्णमर्मगलस्यं कटकं चक्रवर्तिना ।
छत्रं जुगोप नष्टे. सुचमान महाजले ॥ १४८ ॥

वज्रमूर्चीमुखोद्भिन्नं छत्रधारगतांबुना ।
तन्सर्वं नृपतेर्वेद्यमकुर्वन् तत्समीपगाः ॥ १४९ ॥

किं केनेत्यसहे तीक्ष्णं कथयत्यथ राजनि ।
क्षितिग्रस्तं जलं यत्रे नतास्ते तद्रातय ॥ १५० ॥ निरोध्य ।

सारवस्तुप्रदानेन म्लेच्छैर्विनतमौलिभि ।
सारवस्तुप्रभानूर्थं रक्तोदा देवता ययौ ॥ १५१ ॥

साभिषिच्य समुर्वीशं रिपुमंभद्रमासनम् ।
दीप्तरत्नमयं तस्मै प्रददौ भद्रमासनम् ॥ १५२ ॥

निषधं प्राप्य गोशीर्षचंदनाद्यैस्तदीशिना ।
अनुजग्राह स पश्चात्पूजितो दिव्यमेपजं ॥ १५३ ॥

रक्ता देवी नृभिहाय तस्मै सिंहांकमासनम् ।
भयाददायि याताय कृत्वा प्रागभिषेचनम् ॥ १५४ ॥

सदेवमानयानीकैरायर्यौ वृषभाऽचलम् ।
सदेवमानवानीयोऽनुतस्यायन्यजन्मनि ॥ १५५ ॥

तत्रालिख्य समुद्धामदायवीर्यश्रुतादिकम् ।
मकांडकप्रपाताख्यगुहापार्श्वमुपाययौ ॥ १५६ ॥

अदायि तस्मै स्त्रीरत्नं नयसे गगनेचरैः ।
अतोऽदायि नतोदारैरयत्नं दायिने नरैः ॥ १५७ ॥

पृतनापतिना पार्श्वं मंडलाधिपमंडलीम् ।
निर्जित्योद्घाटितद्वारां स गुहामत्यगात्प्रभुः ॥ १५८ ॥

ताम्रमालस्तमामाद्य भृंगारच्छत्रचामरैः ।
अपूजयन्मनोऽन्यैराद्रातत्र चामरैः ॥ १५९ ॥

ऊर्जस्वलां म्लेच्छकुलस्य लक्ष्मीं
निर्जित्य विभ्वां पृतनेश्वरेण ।
पतिर्भुवामश्वपुरं प्रतस्थे
समुन्नतः किंनरगीतकीर्तिः ॥ १६० ॥

अष्टमः सर्गः ।



विकस्वरांभोरुहमभिमाननं
घनस्तनोत्संभितहेमपट्टिकम् ।
मनो मुदं तस्य ततान संततं
ममधुरां पण्यवनैः सहस्रकम् ॥ १ ॥

ततुः पयसीतिकलधतांभ्यया
महागजेंद्राभ्यमिता मरोद्धताः ।
प्रमाणयंत्नऽ्रुपनागणाशिनिं
समुद्धमल्लणमदांबुसिंधाम् ॥ २ ॥

आलभ्यपांलभ्यमन्लयाला
दताय धोम्ह्रुप्रमयाः प्रलीनाः ।
महानदीभात्तना. प्रतंनु
प्रगाढ नद्वैतिमन प्रकंपम् ॥ ३ ॥

मगानमपर्मांलिमवेण विग्य
निर्भातिशमपृतिकनाहमनीली ।
वभुवनुप्पमान्मां प्रगाधी
हार्यतना गसमगदयदेत ॥ ४ ॥

प्रजाभिरम्लाभिगविन्ह्ममार्ग
मुणमपाम्पाद्रि च नम्य धामनः ।
विनम्य पुष्पम प्रन प्रतीभूताः
मवर्णित विग्य नि हशे तिनेति ॥ ५ ॥

मनुहना तुमधगनवःदिना
स विघ्नुहृपमगुनधमा विपम ।

[illegible]

यथैतदक्ष्णोर्गुणसंहितस्था
जगाम पौरैर्नयनाब्जकोटिभिः ॥ ६ ॥

घनप्रवेशे मधुसंभृतश्री—
र्महीभुजो दर्शनयामयर्ना ।
मृगोऽजदर्शनमुदाननीन
भृंगावलीमंजुलमंजरीकः ॥ ७ ॥

प्रयाणकालोचितमार्गचिह्न—
गुञ्जितरमाणीनुरमारस्तावकम् ।
धायान्य विभं स्वदकारिणं त्वां
जयन्तरेखेत् शक्तोऽत्र आत ॥ ८ ॥

पिकावलीकलरुतं मनोभवो
भवंतमन्यप्रति लक्षितो धनुः ।
पतिनमार्गं स्वकं तदन्यथा
शिलीमुखोत्पादितपाणिसंगमा ॥ ९ ॥

तदन्यनारीपरिहीरितां मुखं
स्वस्थगुणगणानुसंधर्मं ।
भयानकत्वानपि नाम संस्थे
यथा तु ते किंचनमो मनोऽत्र ॥ १० ॥

भवानपि त्वं स्वदनाञ्जलि
सर्वोपचारानपि कल्पवृक्ष ।
तथोऽपि तेषां यदयानपरोऽपि
तनूदरीणामभिमानभावम् ॥ ११ ॥

धृत त्वमुद्दीपयसि स्मरारि
मालोलिताला मल्यानिलेन ।

१ ङ अन्य ।

प्रवासिनां चेतसि चूत ! सन्यं
    प्रजंनि मूर्च्छामतियौवनस्थाः ॥ १२ ॥

अयं मनोभूः सहकारमंजरी—
    रुदस्रयंत्येव लघु प्रवासिनः ।
प्रियाः प्रियेनेति समादिशन्निव
    तदाश्रयी कूजति मत्तकोकिलः ॥ १३ ॥

रजःक्षरन्तीः सहकार सांप्रतं
    समुद्वहेः पल्लवरक्तमंजरीः ।
मुखासवामोदलसन्मधुव्रता
    विधेनसे तुभ्यमपि प्रभुः स्मरः ॥ १४ ॥

इति स्म चूतं मनसेव जल्प-
    न्ननल्पसौभाग्यगुणं गुणज्ञः ।
प्रियासहायः सहितो वयस्यै-
    र्वनेऽवनीशो विजहार हृद्ये ॥ १५ ॥

नतभ्रुवामाननगंधगृध्या
    मधुव्रतैस्तत्क्षणमुक्तपुष्पाः ।
अवाप्य लज्जामिव कंपमाना
    नता बभुवुर्वनभूमिवल्ल्यः ॥ १६ ॥

कृतानुयोगा व्रततीषु योषितः
    प्रियैः स्वसंवीक्षणलोलुपेक्षणाः ।
स्वभावमुग्धाः स्मितमेदुराननै-
    रमूरदस्यंत मुहुर्भ्रमांतरैः ॥ १७ ॥

व्यधत्त काचित् तरुपल्लवानां
    न संग्रहं नापि मनो व्यरंसीत् ।

---

१ अग्रं करोति । २ पूर्व ध्यायामे इत्यस्य कर्म् । ३ आम्रमधुगन्धेन विलग्नो भ्रमरा यान्तु । ४ तालमया ।

प्रसारिता नाभवतीव मध्यौ
मदुद्भवदानयुग्य गुरुणा ॥ ५८ ॥
गुर्वी कनाभिविनिवेशयन्त्या
तद्वयोऽनननयमयात् ।
स्यथाविपानामिव मन्मथस्य
तविश्वयामाभिमतमपूर्वा ॥ ५९ ॥

मनुष्य वेत्तार्दितसंप्लवैः
भुजां निजां कथम योजयन्नुपा ।
प्रियां नवार्ताकनकगांडवया
नमागतां वक्षमृणो विशिशन ॥ ६० ॥

अनाल वन्याहत स्तनसमा
दृष्टोकजाता नयनाटनवाद ।
नवपुष्पानानपाटनमुखं
स्थितिवर्ष वाच पदं पदं ॥ ६१ ॥

अमागुप्तनोपम. प्रियाया
हंसस्त्वं वधम बाहुलीद ।
नयापनोऽयं न विविक्तनीरया
बाधस्तस्वं नायानि दृष्टा ॥ ६२ ॥

नभिप्रवाहः सहचारयत्
र्वाम गुर्वी स्विवदनानि ।
सार्थ द्रष्टी सम्बाचमेदाद
दीशश्च मे मानन्त्यानप्रदिमम ॥ ६३ ॥

प्रियास्यथास्य पुर पुरतमुखी
तदंगवद्गतिविदरानंदा ।

अधस्तात्पोत्लत्कुसुमैः सुगंधिभिः
बबंध तस्या कबरीं युवापरः ॥ २४ ॥

निगृह्य केशेष्वथ चापपाणिना
सखीं प्रियस्कंधगतांघ्रिपल्लवा ।
स्वयं सपत्नीजनसंनिधौ वधू
र्लुलाव शाखाग्रिमभूतमंजरीः ॥ २५ ॥

मनोज्ञताऽस्माद्रपि तस्य तस्मात्
तस्येति प्रादिश्य विकाशिवृक्षान् ।
स्वेच्छारतो कश्चन निश्चितात्मा
निनाय जायां विजनप्रदेशं ॥ २६ ॥

बहुप्रसूनाभरणाभिरामा
तरुप्रवालस्तरणे निषण्णा ।
उपांतवर्तिन्यचकाश काचित्
प्रिये वसंते वनदेवतेव ॥ २७ ॥

विसृष्टवन्यप्रसवोदरस्थिते—
र्मधुव्रतानां नियहाद्विभिद्रुतात् ।
मनोरमामोदमुखारविंदया
कयाचिदभ्राम्यत सत्वरं भिया ॥ २८ ॥

मनोज्ञमाल्यं दयितेन यच्छता
प्रिया सपत्नी गुणनामधोदिता ।
ह्रिया हृताऽसूयमभूदधोमुखी
तमुद्वहंतीव हृदि व्यवस्थितम् ॥ २९ ॥

प्रसूनपल्लीमवलूय कश्चित्
कांतासखीनां निकटं जगाम ।

---

१ केशपंश ।

उद्वृत्य शाखामविधामुखाम—
भिन्नस्वमात्मकार्यमिव प्रियायाः ॥ १० ॥

स्तनान्तलीनात्प्रवर्धयमाना—
हारयांशुजं संसर्गमिनेन द्विरेफान ।
निवात नारी स्वरसामयुक्ता
वंशप्रमाणांहिमगर्भगुहाय ॥ ११ ॥

निसंवदेशान्तरपत्रमयान्तरे
भुजाङ्कदंष्ट्रोद्धमेनापत्रालिर्णाम ।
आलोकयन् कथाम कामिनी पुष्पा
स्वतान्निकुञ्जमगयमहोत्सवः ॥ १२ ॥

प्रधायवंशं जयनन्दनाने
भवेन द्विरेफमाला विलंबिनी ।
रतिविलासाधिवसनजमनिलया
निवासयामास वृन्तोऽङ्गिः प्रियया ॥ १३ ॥

पुष्पाननाम्नोदृश्यमविशः
स्तीनु सरसनुमनस्वयंदृशाखा ।
कथायुक्ताभ्ये वर्तिः प्रवार
यातिभूमङ्कुमाल्यालिस्कन्दा ॥ १४ ॥

मधुरभाणिम्यवृ वीणा जा
यथा जाते मनार्णांशेव दृशा ।
पुपुष सरयाः परितोषविधं
रसन्यः परागपुष्पीवमधु ॥ १५ ॥

अथापि सर्वे भवीवतिरोभासा
मधुपैरथोद्गमोधिषु विघने ।

१ [illegible] । २ [illegible] ।

निरीक्ष्य नागैर्द्रुमकोटरोन्मुखैः
मदित्सयेवोन्मणिभिश्च शुशुभे ॥ ३६ ॥

क यासि मत्प्राणसमा विलोचन—
श्रियं त्वदुन्मुष्य मृगीति कश्चन ।
प्रयुज्य पाणिं हरिणीमनुव्रजन्
मनं हसन्न प्रियया विकोपया ॥ ३७ ॥

तलं मरन्दैः कठिनाश्मधूलया
प्रभुचनं नम्रविलोकयेति ।
निपाय काचित्प्रयनोपकंठं
पन्गुरुणपन्नीजनमनिधाने ॥ ३८ ॥

मितप्रहारेण नवप्रसूनैः
केलीविमानप्रविनिर्मितेन ।
अंजनमनः किंचन संगतीती
यथार्थनामाऽजनि पुष्पबाणैः ॥ ३९ ॥

रहः पराभूतनवंप्रियत्वर्ण
प्रमोदयन्तं नृपतिनामिव मिपाम ।
किनाः जहारीव नवप्रसूनकै-
र्गुणानमनंगेन प्रभूतनिभ्रमे ॥ ४० ॥

भृशं मदा नवकाननमनने
विनीदनीलानविलोकनेक्षणा ।
अनीतमन्मथमनुर्यां रतिभ्रमा
नमस्तमानम्य शिरो नवानन ॥ ४१ ॥

वहिर्गता आगवनीमहाणां
छायाविलासविलासपत्र्या ।

---

१ [illegible]

प्रविश्य दास्यामयमंडपानां
मंडपदोषेनरलीलामेतु ॥ ४२ ॥

सुधेषु चांमारविहारनिष्ठा
ललपुष्पामानमंदीवधान् ।
लावण्यसिन्धोरिव पूर्णिमां —
सोमीर्दविद्रुमरंजिंपन ॥ ४३ ॥

नीलांबरं गांगुल्यमंदि निवां
विनंबभागादिव संवरीन। ।
प्रियांगवेलाललितोल्लिनागया
दानवेभूषुलरपुलसीधया ॥ ४४ ॥

उद्दामोदेनसंपर्वपुर -
लतांतवेन दानवानलम् ।
हतभ्रां बन्धविमोहसंपया
जनादागाय प्रतिभाय पुपुतम ॥ ४५ ॥

दालायलबालस्दलिक दलाना
मर्तीके लव्यामलवेदरांशु ।
अभिव्यर्जितस्ता वियोगन् स्व
भूवं तदा वनभूतो वनदी ॥ ४६ ॥

स्वच्छागुणाचारनरोधनला
नोभोतलाञ्चनपरस्य वोला ।
उत्पुल्लपद्मेषु वर्षपुराग -
गुलमतिपउधमननि गुलया ॥ ४७ ॥

विश्रम्य लजानिर्बलिव्दवाला
सदानार धीरैविनागुलर्भपदाम

-१ [illegible] । [illegible] ॥ ४२ ॥

अतद्गुणाः कैश्चन चारुवारिजै—
रधोमुखत्वं त्रपयेव संदधे ॥ ४८ ॥

विकस्वरांभोरुहगर्भनिस्सरन्
मधुव्रतश्रीमधुरस्वरोद्गमैः ।
उपेयुषस्त्वामुपभोक्तुमिच्छया
प्रियं जगादेव सुपद्म सद्मनि ॥ ४९ ॥

कस्याश्चिदंभः प्रथमं प्रविश्य
प्रियेण वक्त्राभिमुखं प्रयुक्तम् ।
स्वजात्ययोग्यं बत [illegible]—
[illegible]धननामियाय ॥ ५० ॥

[illegible] किमर्थानि [illegible]
[illegible] कथन [illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ ५१ ॥

[illegible]
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] प्रिया ॥ ५२ ॥

[illegible]
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ ५३ ॥

[illegible]
[illegible] ।
[illegible] ।
[illegible] ॥ ५४ ॥

वरांगुले नागवधूं दृश्याता
यथुष पुंसां नयनाभिरामम् ।
स्तनोदरि पावनेन शीलवेन्धा
ममाननः शशधने मृणालैः ॥ ५५ ॥

अपत्यपृथ्वीः स्निग्धसंश्रया हर्षं
स्विदश्यति प्रियनि मत्कृतेण ।
विरक्तपत्ना संदूषकादकस्या
वाधुव मायाकलुषीकृते पथः ॥ ५६ ॥

अनुग्रहकारि मनुष्यपुत्रिया
तनाय कार्यविकल्पांकुमारमता ।
अतः पुनर्गायनुलोचन हर्षिते
विनोदयन्ती आश्वेव मालिव ॥ ५७ ॥

कतीच दीर्घेण मृणालपदि
हाहन्य पंक्तीवनमुनिरेव ।
चरीच पवांमयचाद्यपालम्
कार्यो गजान्ति इच विवाद्य ॥ ५८ ॥

सीतान्तरवर्णितप्रमदाधवारं
तीरे गजाररमवर्णवद्धे ।
यथुप नवशीवार्दिवाने
निशीथ यौवनं पयोदरींवं ॥ ५९ ॥

अथैवमत्यन्तसंवर्धितन—
मयाप्रदेयोमन्यावितवतिर्ति ।
विनादभुवाणनवविपालिता ।
विजय वेधा प्रथमेव दीर्घिका ॥ ६० ॥

प्रवेतकंशमन्युचालनवेष्टन.
—विसमे अमेरि वारिव कोकिके ।

यभंज तत् कंञ्जुमतोऽपि पयदाः
प्रणय जग्मुर्व्यधिका इवासवः ॥ ६१ ॥
स्नानं नलिन्याः परिहृत्य काचित्
पत्रेण तोयोक्षितमुत्तरीयाम् ।
अवीक्षमाणा प्रियमन्वपृत्सीत्
त्वया गृहीतं क नु तस्करेति ॥ ६२ ॥
रतोत्सवे तामिरिमाभियुक्तं
नूनं पतीनां परिहासहेतिम् ।
विकल्पयन्त्यः खलु चक्रवाका—
स्त्रपावनम्रा विदधुः पुरंध्रीः ॥ ६३ ॥
प्रियस्य कण्ठं परिरभ्य पीडितं
भयादिवागाधजलव्यवस्थितेः ।
चकार काचिज्जलपालिकारवं
हाकुल्लकोलाहलगर्भदुःश्रयम् ॥ ६४ ॥
तनधुयोऽन्या मन्मथमर्मगोचरं
सुधानुयोगं व्यदिशत्स्वनुत्तरम् ।
ससम्भ्रमद्भुजयोर्मृणालिका—
मदुद्भवाग्नियन्त्रमधाद्विले तया ॥ ६५ ॥
निरीक्ष्य कान्तानुमतानुबन्धं
तरंगतास्वासु रथाङ्गनाम्ना ।
कर्णोत्पलनिश्वासमनाग्नदग्ध—
र्धनमन्नतां कांचिदपत्रदाक्षाम् ॥ ६६ ॥
लीलासनघाततृणत्वसर्णा—
कृष्णत्पयस्तृणमर्गांकिलांमाः ।
मकरन्दसंगमहृतानुराग—
र्मार्गविमाकारेण सरोजभार्याः ॥ ६७ ॥

अष्टमः सर्गः ।

कुन्तली धवलपत्रय गोपिनां
उत्सारगोऽलो जलदेन्द्रियमयम् ।
चिनिहतीनवनेत्रपंक्तिभि—
र्विरतांशहयं मृगासिंधवान ॥ २८ ॥

विगलितवोधुमहृदयमनलमां
स्वयुगलस्वनलस्तकंठविश्वनाम ।
विसर्गस्मासलभिरूप निर्जने
मृगः स दीर्घ नयदीपंवलिनाम ॥ २९ ॥

कृपोंटकोधः कृपाणवंला
ध्यायोऽविवेककिरणालस्वय ।
समागमात्ताम जाडिनं नराधम
रामेगणिस सह नवनिष्य ॥ ३० ॥

शुभेन हताशी वस्त्रसवदा
वस्तिस्थारण वाले कोई ।
वातविविधामुनंदहाम
दामरामान पुनर हरर ॥ ३१ ॥

श्रुणा स मंत्र विभूता भूपति
स्तमय नूनं पुत्रकालोन न ।
नयप्रणुरुस्यथनालमाहर
ऊनाय पुसर्हितनिर्यातेषु—रवम् ॥ ३२ ॥

मनिसनो आयपरिहास्याचनेषु
दिवनि धमो विवर्धतस्यारिषु ।
न हाम्रते अस्पृति स्वरदय—
स्वरान्वष्टदपु अर्पित ह्राय ॥ ३३

नयो नवं वान्ततितं वपुस्तम्
तुतं कृषा रूप स्त्रान्ते ॥ ३४ ॥

द्विगाम्बमार्यंति परं न जानं—
स्तर्किनोपस्थितमंतकस्य ॥ ७४ ॥

तनोत्यविद्वान् मृगबद्धिमोहं
विद्वान् स्वविद्या मृगतृष्णिका चेत् ।
वितीर्यतां तर्हि विवेकदीप्रि—
स्तुत्यंजलिस्मत्यजलांजलिर्या ॥ ७५ ॥

यदि प्रियास्वादविनाशिपवल्ं
गुणच्छिदं यत्पुनापसंधियः ।
अनात्मनीनं तत एव तर्हि तद्—
र्थय धिग्धिग् विषयोन्मुखं सुखम् ॥ ७६ ॥

इति स्वनिर्वेदविधेयया धिया
विधाय राज्यं निजपुत्रगोचरम् ।
स भूपतीनां निवहेन सेवितो
घनं प्रनस्थे घनजोपमाननः ॥ ७७ ॥

क्षेमंकरं प्राप्य यतिप्रवीरं
तपः समाधाय नृपप्रवीरः ।
जगाम दीर्घं नियमस्थमार्गं
निम्बिदाधारामुखतुल्यमर्गं ॥ ७८ ॥

रसानलायास्तुरंतदु स्वं
चिरंतनारातितुदस्य तस्य ।
किरातजातो गुणवर्जितानां
कुरंगनामाऽजनि तुंगकायः ॥ ७९ ॥

विरक्तिमान्सा विपुलाद्रिसंश्रये
समाधिमारुपाय शिलातले स्थितम् ।
अपदयदुन्मीलितवैरया दृशा
सहसा स पार्श्वगतो यतीश्वरम् ॥ ८० ॥

अष्टमः सर्गः ।

अन्तर्हितप्रीतिः मधुरेण स्तुवन्तो
गुणान्वर्णोऽस्य गुणान्वयाश्रयं ।
निपातयामास यति न पार्थवं
धूमं यशस्वाकरणेन पश्चिमा ॥ ८१ ॥

वाही च अंशय हि वाजिनाम्बरं
मनूजानां नियमेनतोषुनः ।
आलम्ब शुभं मधुमञ्जरीजाडं
न नाम्य दृष्टान्तगुणोपगं ॥ ८२ ॥

यदनार्जितमन्यस्तावर्णकं
वेदे स्वगुणा गुणितावबन्धी ।
गुणप्रवर्त्तनाय गुणाद्वासय
प्रवर्त्तनं प्राप्य स्थितं निवेशे ॥ ८३ ॥

न स्मरामो गुणिभूषणोऽपीतिलेख्या
विनयेन अयनामयानुगीं सा ।
गुणेन वै नीलमणोरवपूर्ता
समाधिव विरागितापेक्षता ॥ ८४ ॥

अथ त्रिदशागुणोपितामहात्
वेदस्य राजा स्वतः बलबाहु ।
पुरान्विशे यत्र च सार्थमाला
मनस्वयाच्या च यावन्त्योऽर्थाय ॥ ८५ ॥

अधीनविमलम् विलयन्त्र मनेना
न नयनायपरा च धे प्रवेशिता ।
अभाजने मम अनादिकालिता
यथार्थे तद्गत एव देहिने ॥ ८६ ॥

पुण्य विनुधवर्षे देवकं
मधुरस्यामा: पुरुषे वर्तुपरा ।

उपस्तुता तस्य गुणैरसौ पुन-
स्तदैव सर्वं सुषुवे मनीषितम् ॥ ८७ ॥

आन्वीक्षिकी चात्मविदः प्रभेव
दीपस्य मूलेव सुरद्रुमस्य ।
रूपार्पदीमा च गुणान्विता च
प्रभाकरी तस्य बभूव कान्ता ॥ ८८ ॥

तामुद्वहन्नाह्निनपत्रशोभां
रम्भोपमामायितलोचनाम् ।
कर्णेन्दिरामाक्रमितां चमासे
नृपस्य नित्यं नलिनीमिवार्कः ॥ ८९ ॥

ततो न नाथी भ्रमभोगमात्मन-
स्तमेव भोगं प्रणयादयुध्यत ।
प्रवृद्धरागस्य च तां न च प्रियं
निजप्रियां प्रीतिमयुक्त चातुर्या ॥ ९० ॥

उद्दामभूर्धा स तथा कुलोदयं
दृष्ट्वा दिवाकारदमिन्द्रमागतम् ।
दानप्रतोः प्रानरभीष्टयाद्वया
दिवा महस्यानुमियोरयाम्बलः ॥ ९१ ॥

पाद्दारतल्पार्णवचक्रमुपं
गर्भान्तिमहासनमुग्मरेभम् ।
मृभृदारम्भानमनीय दीप्तं
गुणुमगच्छप्रमपन मेने ॥ ९२ ॥

तस्योरसि कालक्रमेविदो -
दंष्ट्रा प्रतीर्णोच भूपं नृपार्थाः ।
चकार मर्यादपमानुरूपा
कृतप्रनामाञ्जलिर्भीपरोरम ॥ ९३ ॥

[illegible]
प्रसादि[illegible]मानसाः ।
[illegible]
[illegible] परिस्फारिता इव ॥ १०४ ॥

यथा च [illegible]
[illegible] विमृदनामगुः ।
तथा च [illegible]
[illegible] ॥ १०५ ॥

[illegible]
[illegible] ।
इदं तु [illegible]
[illegible] ॥ १०६ ॥

[illegible]
[illegible] च [illegible] च [illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ १०७ ॥

[illegible]
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] च [illegible] च [illegible] ॥ १०८ ॥

[illegible]
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] इव ॥ १०९ ॥

[illegible]

ततस्तृतीये जरयापहास्ये
विरक्तचेता वयसि क्षितीन्द्रः ।
सितातपत्रं स्वसुताय दत्वा
वनं तपस्यानरुचिः प्रतस्थे ॥ १०० ॥

आनंदने नग इवोदयधाम्नि राज्यं
प्राज्यं तुषारकरबिंबमिवोज्जगाम ।
दीर्घं करेषु विदधौ कुमुदानुकूल्यं
किं तु क्रमादपि दिशं न परां प्रमेने ॥ १०१

अधिकविनमितायां तस्य दंडेन भूमौ
भिय इव विनिपाता सर्वदिग्भ्यो निभृत्यां ।
उपरि स परिरेभे पार्थिवैश्वर्युदात्तः
स्थितिसुखमधिगंतुं कल्पवल्लीफललक्ष्म्या ॥ १०

आक्राम्याहमनीश्वपार्थिवजनमभ्युन्नतं रत्नावली
ज्योतिश्चक्रविनायकोऽथविकसत्पादारविंदश्रयः ।
तापानुश्रयतःप्रशेषयत्नाः कुर्वन् दिशाः सर्वदा
गीर्वाणायतनक्रमः स बुभुजे भूरिश्रियं भूपतिः॥ १०

इति श्रीवादिराजसूरिविरचिते श्रीपार्श्वजिनेश्वरचरिते
महाकाव्ये आनंदराज्यादिवर्णनं नाम
अष्टम सर्गः ।

---

१ स्वैर-प्रम्लैन । २ विलुप्त —विरतीत्यत्र ।

नवमः सर्गः ।



पूर्वपुण्य[illegible] [illegible]-
र्धार्मिक[illegible] भूपतिः ।
सर्वसंपत्[illegible] जिन-
धामकं [illegible] ॥ १ ॥

तं पुनर्जिनमहं [illegible]
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ २ ॥

[illegible]
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ ३ ॥

[illegible]
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ ४ ॥

[illegible] जिना
[illegible] ।
[illegible] –
[illegible] ॥ ५ ॥

[illegible]
[illegible] ।

संयमस्थिरपदप्रयतैना
लब्धरम्यविलसद्विभूतयः ॥ ६ ॥

कामनिग्रहनिराकुलं मनो
पोषयंत इव भोगनिस्पृहाः ।
सर्वतः स्वमनयच्चनागुणं
सूचयंत इव यांयरत्यजः ॥ ७ ॥

तीव्रयोगपवनप्रयत्नेना
घातकर्मपटलोपमाथहम् ।
दुर्धरमन्मथशरव्यतीयका—
यत्नमोगगनलिप्तविभ्रमः ॥ ८ ॥

भूमिजन्मगन्धि परीषह—
माहलीढगतयोऽन्यविक्रियाः ।
पापनीतिविधिनिकृन्तना मणुन्—
व्याहता इव लघू निर्मलीयः ॥ ९ ॥

मूर्तिनिर्गनिग्रमूढमुत्तम [illegible]
निर्वपुण्यमथाभिषेकनाम् ।
तन्वतिं पुण्यनिपुण्यकृत—
प्रश्रयो धनमसिम्यपोतन ॥ १० ॥

[illegible]
मार्गिमानपक्षिमपुनोदधैः ।
[illegible]
वक्तु [illegible] ॥ ११ ॥

[illegible] मम [illegible]
[illegible] नेत्र च [illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ १२ ॥

हृचिपिनरचितेदर्पभूनं
    अनयितयविरतं हर्षमनमा ।
मम्भगं मुनिजनेन कथ्यते
    मीनिमज्ञमतीपिनजम् ॥ १३ ॥

अन्तु या मदहनाः पुनो ममा
    केनमेन भुवने जिमाण्याः ।
ईदृशेष स्वमानि मापने
    महना ना मनु विनतापते ॥ १४ ॥

वारधेनुग्य विप्रमामम
    कमोलमादि धनुवनवर्तिवरम् ।
विवृद्धोलनविनारवरमप –
    मीमूनं धगानृनो नु मानमी ॥ १५ ॥

मानेयनुयमपालिबेमनः
    मनाति मनमानं मनो जिम ।
किं जनता पुनरे मदतीनां
    अनिवेच नानु वनमनानि ॥ १६ ॥

किं न किं ननुर्वकिमलिनपा
    मानुदानि वधिनाविकारिणी ।
कनिनमनुमर्जुशाननपा
    मरपणदेवानुपान मेन ॥ ॥ १७ ॥

धरान मानवि मन नरह कि
    मादिनोत्तानिकानरानुव ।
दुग्नमापहनं न न पन
    कि पुन महनिभिनूरे ॥ १८ ॥

वंशवनादिनतुवनुरुम –
    वव पमानानि मामने ।

बंधुरेव स पुनर्मनस्विनः
संधिविग्रहविधौ विधित्सते ॥ १९ ॥

द्रव्यकर्तृकसमत्वयोजना
युज्यते न जिन नित्यवेदमतु ।
तादृशो हि सुविवेचयंस्तैः—
न नैष्ठिककारणनिर्णयः ॥ २० ॥

संति ते सुरविमानसंनिभाः
मर्त्यलोकनिलये जिनालयाः ।
भव्यकर्मकृतनिष्पन्नपूजनाः
प्रस्फुरन्मणिविनिर्मितमूर्तयः ॥ २१ ॥

यत्र तेन भगवन्नु शासनाः
संति भासुरविमानसंनिभाः ।
दीप्तदीप्तिमयमंडलोदरो--
[illegible] ॥ २२ ॥

[illegible]
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ २३ ॥

[illegible]
[illegible] ।
[illegible]—
[illegible] ॥ २४ ॥

[illegible]
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ २५ ॥

पुण्यहृत् सोऽजयमहृत् सद्गुणा
गण्यरेखगुणगतिरव्ययं ।
अभ्यतां पुण्यजैः कर्म हि का—
पुण्यरेखमनसा कथायितिं ॥ ५६ ॥

मंदयुक्तमहृद्य आयता
रक्तसंहननतो क्यानुजा ।
तेन धैर्यगुणसर्वितं
सर्वथा गुणदायकाप्य प्रजा ॥ ६३ ॥

पुंगतापगतसंततोर्जितं
तं प्रति प्रतिपत्नु हितलता ।
सद्गुणिच्छ्रुमधावस्य
तत्पादारपुरुषनासया ॥ ६४ ॥

भूमिपतानु च विमल चासितम
तमालम्ब पवर्गनांगुलिव ।
पुण्य हेममनुविमम् विवर
ममगुणाय हेमतां ॥ ६५ ॥

शुभमण्डितमनाहृतमयता-
सदानां गुणकारणांशितम् ।
तापसेन मनुः सता सहसा
विपर्यासविपत्त स्वपासितम् ॥ ६६ ॥

सत्य विलिप्तं हितां सदायत
हित मितापूर्वमितयत सासन
आदर्श व सायसिवासत ॥
यपस्या विविलितारसहरवम् ॥ ६७ ॥

मानस विकरैषालस्व
सत्याचरत च मनोदृत्यमा

आदरादिकमलोकयत्पुरः
स्फारचारुमुकुरोदरे वपुः ॥ ३२ ॥
इंद्रनीलरुचिरोमचिस्तरे
मस्तके पलितमूचयः कचित् ।
तेन संददृशिरे निशामय—
स्यामिकास्पृश इवेंदुरश्मयः ॥ ३३ ॥
तन्नियद्धपलितांकुरं शिरः
प्रत्यबुध्यत स बुद्धिमत्प्रियः ।
तत्क्षणे विदलितं जरद्वयः
कालसर्पदशनांकुरैरिव ॥ ३४ ॥
इतोऽमन्यत जरी शिरस्ययं
लग्न एव सितवालकैर्लया ।
उल्लसन्मदपरिष्वङ्गविलासिनी—
हाससंद्ररुचिबंधुपांडिमा ॥ ३५ ॥
मुंच मां तरुणि भोगलालसे
तावदेत्यवयसा विरूपकम् ।
यावदेव न जुगुप्सया त्वयि
स्मेरचारुवदनो वधूजनः ॥ ३६ ॥
यज्ञबाहुमभिषिच्य स क्षिते
रक्षणाय तनयं ततो नृपः ।
निर्जितप्रसवकार्मुकैर्वृतो
राजिभिर्वननिवासमव्रजत् ॥ ३७ ॥
निर्विमुच्य दलितस्पृहागुण-
ग्रंथिरंगबहिरंगमंडनम् ।
आददे न निधिगुप्तिसंनिधा
बोधगोचरतमोपहं तपः ॥ ३८ ॥

सर्वं निस्पृहमर्थम् अन्यत्र-
[illegible] स्तुतिभिः [illegible]म् ।
अन्यस्य [illegible] च-
[illegible] च न [illegible]ः ॥ ४९ ॥

[illegible] प्रतिधिया [illegible]
[illegible] मुनिः ।
[illegible] —
[illegible] ॥ ५० ॥

[illegible]
[illegible] ।
[illegible]म्
[illegible] ॥ ५१ ॥

[illegible] —
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ ५२ ॥

[illegible]
[illegible]म् ।
[illegible]
[illegible] ॥ ५३ ॥

[illegible]
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ ५४ ॥

[illegible]
[illegible]

सिंधुकेलिकृतये कदाचन
व्योमवाहितविमानपंक्तिभिः ।
तेन देवनिवहेन गच्छता
जंगमेव नगरी विनिर्ममे ॥ ५८ ॥

वारिधौ नरसितो विमासुर—
र्वारुतो जलविलासकेलये ।
व्योमनः स निरगाद्देकदा
वारिवाह इव विद्युतावृतः ॥ ५९ ॥

अर्धतुर्यमदरत्निसंमितं
व्यासि मासि दशमे दधद्वपुः ।
सोऽन्यसुंमः शिविभेदधर्ममयं
विंशतिर्विमलर्धाभ्दस्यनाम् ॥ ६० ॥

तस्य यत्मरम्महस्थयिदानि —
स्यंस्यसम्भृतिगना भूनाशिनः ।
सन्निधानमगमद्गुणोदधे—
स्त्यमारभयमागणायधिः ॥ ६१ ॥

तत्र सत्यसमरे स लीलया
येननेम हरिविष्टरं हरेः ।
धर्मतीर्थमवनारविप्लव—
स्तस्य संतादिव पश्चिमं पयः ॥ ६२ ॥

तत्प्रभावदवधाय संभ्रमा—
दासनात्सपदि सनकं गतम् ।
तं ननाम जयकारपूर्वकं
मौलिकुड्मलनिविष्टहृदिनांजलिः ॥ ६३ ॥

तत्प्रलम्भरणमात्रसंगता
संजगाद मुनिनां कुमारिकाः ।

इयमाभ्यवृत्तगीतकैतव —
    [illegible] ॥ ६४ ॥

आविर्भूतं भुवनमनुभावं
    [illegible] ।
[illegible]
    [illegible] ॥ ६५ ॥

आलयालयम्भे[illegible]
    [illegible] ।
अंग जम्बूर्ण[illegible]
    [illegible] ॥ ६६ ॥

[illegible]
    [illegible] ।
[illegible]
    [illegible] ॥ [illegible] ॥

[illegible]
    [illegible] ।
[illegible]
    [illegible] ॥ [illegible] ॥

[illegible]
    [illegible] ।
[illegible]
    [illegible] ॥ [illegible] ॥

[illegible]
    [illegible] ।
[illegible]
    [illegible] ॥ [illegible] ॥

मुख्यसौरभसमीरसंगत—
　　स्पंदिताद्ररसरागपल्लया ।
निर्मलस्मितसुधानयोद्गमा
　　स्पर्द्धते मधुवनश्रिया वधूः ॥ ७१ ॥

पालिकातरलनेत्रयुग्मनि—
　　ष्कूननिर्मलमयूखलेखया ।
सिंधुवारकुसुमावतंसन-
　　बंधनामिव करोति कर्णयोः ॥ ७२ ॥

आलि पश्य मृगलोचनाकुचौ
　　तारहारनिकरप्लेदिनौ तकौ
कौसिनबंधुरपृहत्तरंगिणी—
　　चक्रवाकमिथुनायताविमौ ॥ ७३ ॥

कोमलाहतिमृणोल्लसंकया
　　लीलयोन्नमितकंठकंदलाः ।
सुंदरीकलमनिर्मोमलाः [illegible]
　　केलिहंसशिशवो विहंगमाः ॥ ७४ ॥

पाति नन्वधि जिनेशमंडले
　　गात्र[illegible] मनभुवः ।
पीतरक्त[illegible]
　　छिन्नपत्रमिव मुक्त[illegible] ॥ ७५ ॥

[illegible]मनाश्रमस्तरा
　　बालहंसपतिना विराजते ।
निश्वसनमनु[illegible]
　　विभ्रमा [illegible] ॥ ७६ ॥

[illegible]
　　[illegible] ।

[illegible]
[illegible] ॥ ३३ ॥

[illegible]
[illegible] ।

[illegible]
[illegible] ॥ ३४ ॥

[illegible]
[illegible] ।

[illegible]
[illegible] ॥ ३५ ॥

[illegible]
[illegible] ।

[illegible]
[illegible] ॥ ३६ ॥

[illegible]
[illegible] ।

[illegible]
[illegible] ॥ ३७ ॥

[illegible]
[illegible] ।

[illegible]
[illegible] ॥ ३८ ॥

[illegible]
[illegible] ।

[illegible]
[illegible] ॥ ३९ ॥

अंगुलीदलविलासमद्भुता-
लीढलालकलपल्लकीगणे ।
रागराजमुद्रपारयत्परा
पंचमं युवतिभिर्जगत्जनम् ॥ ८४ ॥

किसरमथितवंशुवंशुर—
ग्रामरागनगिरांगहारणा ।
अन्तराभितरथे मनभुवे
गुधरा रमितलाम्पलीनया ॥ ८५ ॥

नाननानलिनमानुचर्चित
वपुर नर्तनि निर्मितागर्दैः ।
हेमपुलिनभनमुराणण
नम्रभाकलिनिभिना रिशोऽलिन्ना ॥ ८६ ॥

निभाति चक्रकरणाररनाति-
मत्पुटांत्यनिनगाडणानन्दः ।
निणननमणिमणीनिभेगुरी
व्योमनाभिनिन्नेश्वरानव ॥ ८७ ॥

अभिनाभिनर्तिनानिनूनना—
नेकन्नरलिमणत नम ।
अन्तरीत मनूनूनामनिनिर्क
भिनवेनरिनि निभिमणा मरिव ॥ ८८ ॥

आरम्भनर्तिनानातुंडीत्कनि—
भीन्द्रजनधहमा रनानिनि ।
अनुनानूर्ष्यनानि नाम्बिन
व्योमानि वर्णितनाडुंडूर्नि ॥ ८९ ॥

[illegible]—
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ [illegible] ॥

[illegible]
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ [illegible] ॥

[illegible]
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ [illegible] ॥

[illegible]
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ [illegible] ॥

[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible] ॥ [illegible] ॥

[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible] ॥ [illegible] ॥

आस्थानावनतारिमौलिविलसन्माणिक्यरश्मिराय धि
गते तस्सकलं ज्वलेद्यदृष्टः सिंहासनाध्यासिता ।
तस्य सोऽप्यऽपराजितस्य भवेत्पुत्रस्त्रिलोकीपतिः
सा ध्यानं समवाप [illegible] सभूत्पुत्रस्य मोऽहमिता ॥९१॥

इति श्रीवादिराजसूरिविरचिते पार्श्वनाथचरिते

[illegible] [illegible]

[illegible]

दशमः सर्गः ।

अथ [illegible]
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ १ ॥

[illegible]
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ २ ॥

[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible] ॥ ३ ॥

[illegible]
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ ४ ॥

[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible] ॥ ५ ॥

[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible] ॥ ६ ॥

उपनतसुरसुमसमधिकं
    निपमितसर्वर्तुजः क्षणानुबंधम् ।
जिनवरजनने जगत्समस्तं
    क्षणमिव मुक्तमभूद्गुरुकरागम् ॥ ७ ॥
नयपरिमलमांसभावरूप -
    समदलिमेचकितास्मकल्पधामाम् ।
अविरलबहला सुरद्रुमाणां
    नृपतिगृहे निपपात पुष्पवृष्टिः ॥ ८ ॥
जय जय भगवञ्जिनेंद्रचंद्र
    त्रिभुवनश्रीगनिकायनित्यबंधो ।
श्रुतिपथमधुरागरध्वनीयं
    गगनतले गगने [illegible] ॥ ९ ॥
त्रिभुवनमयैव देवराजः
    [illegible] महामेरौ ।
[illegible] समस्थं
    [illegible] ॥ १० ॥
[illegible] -
    [illegible] ।
[illegible]
    [illegible] बभूव ॥ ११ ॥
[illegible] -
    [illegible] ।
[illegible]
    [illegible] विभवम् ॥ १२ ॥
[illegible]
    [illegible] ।

प्रथि[illegible]
[illegible] ॥ १३ ॥

प्रथि[illegible] पवनान—
[illegible]।
मधुरमिव [illegible]
[illegible] ॥ १४ ॥

[illegible]
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ १५ ॥

[illegible]
[illegible] ।
[illegible]—
[illegible] ॥ १६ ॥

[illegible]
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ १७ ॥

[illegible]
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ १८ ॥

[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible] ॥ १९ ॥

[illegible]
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ २० ॥
[illegible]
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ २१ ॥
[illegible]
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ २२ ॥
[illegible]
भुवनगुरुविपया समभिमानः ।
स्तुतिमुखरमुखाम्बुजेन भूम्ना
प्रतिजगृहे न कालिकर्मशिष्णुः ॥ २३ ॥

स्फुटदरुणगणान्तनायकल्प
प्रतिकथनापि मुहु महद्भ्रमस्थान् ।
जिनवपुषि शिरो जना न लेभे
भयहृत्धामभृति प्रमोदसूतिः ॥ २४ ॥

प्रतिनवनयनाभिरम्यश्रीमि
वहल्लमालरुचि वहद्गिरींद्रम् ।
स दिनकृदुदयाद्रितुल्यलीलः
कुलिशधरः प्रतिमंदरं प्रतस्थे ॥ २५ ॥

प्रविसरदमृतोदधिदुलब्ध—
स्फुटजडिमासनमेरुगंधबंधुः ।

[illegible]
[illegible] ॥ ५४ ॥

[illegible]
[illegible]।
[illegible]
[illegible] ॥ ५५ ॥

[illegible]
[illegible]।
[illegible]
[illegible] ॥ ५६ ॥

[illegible]
[illegible]।
[illegible]
[illegible] ॥ ५७ ॥

[illegible]
[illegible]।
[illegible]
[illegible] ॥ ५८ ॥

[illegible]
[illegible]।
[illegible]
[illegible] ॥ ५९ ॥

[illegible]
[illegible]।
[illegible]
[illegible] ॥ ६० ॥

अविरलधवलातपत्रपुञ्ज—
    विहतपथः स दिवौकसां प्रवाहः ।
स्वयमिव जिनदेवमञ्जनार्थं
    गिरिशिखरं प्रययौ पयः पयोधेः ॥ ३३ ॥

प्रतिफलितनिलिम्पमूरिकोला—
    हलजयकारबृहद्दरीमुखौघैः ।
गिरिरिह तु मुकुलस्थलाब्जपाणि-
    र्भुवनगुरुस्तवनं खलु व्यधत्त ॥ ३४ ॥

पृथुमणिमयपाण्डुकम्बलाख्य-
    प्रथितशिलास्थितरत्नसिंहपीठम् ।
जिनपतिमधिरोप्य देवराज—
    स्नपनविधायविकोऽस्थमभ्ययुङ्क्त ॥ ३५ ॥

अमृतमुपनिनीषवो मगेन्द्रा—
    द्रमृतभुजः सविलासमासमुद्रात् ।
अविरलगतयो नमस्यभूवन्
    दृढतरसेतुबन्धतुल्यलीलाम् ॥ ३६ ॥

किमगमदमृतार्णवस्थमर्त्यां
    द्विविजगिरिं द्विविजैरुपोपनिन्ये ।
अविदितमिति केवलं भुलोके
    नमसि वहन्नमलस्तु दुग्धराशिः ॥ ३७ ॥

प्रविकचकुमुदैरिवोद्बभासे
    पयसि तरत्तरलैस्तु तारकौघैः ।
तदुभयतटवृत्तिभित्तिरस्तु लेभे
    प्रविततशीकरभूरिविभ्रमश्रीः ॥ ३८ ॥

चटुचटुमुखयाद्बलीढपृष्ठैः
    कलकघटैः स सुधाकपिर्विरेजे ।

भुजग[illegible]
पृथुल[illegible] ॥ ४० ॥

त्रिभुवन[illegible]
[illegible] ।
परि[illegible]
[illegible] ॥ [illegible] ॥

[illegible]
[illegible] ।
त्रिभुवन[illegible]—
[illegible] ॥ [illegible] ॥

[illegible]
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ [illegible] ॥

पृथुल[illegible]—
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ [illegible] ॥

अति[illegible]
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ [illegible] ॥

अति[illegible]
[illegible] ।
अति[illegible]
[illegible] ॥ [illegible] ॥

अतिगुरुगुणजैनभक्तिगर्भा
भृशमभूतः स्वपनोद्भवावगाढाः ।
अधिकृतजलकेलयः सकोला-
हलमधिगम्य दिशासु देव चक्रुः ॥ ४६ ॥

गिरिवरमभिविश्य देवसंघं
त्रिदशपतिः स बहुत्वप्रमोदः ।
जिनगुणमणिसंघसंगीयं
भुवनगुरोः स पुरोऽमरो ननर्त ॥ ४७ ॥

अगणितयुतिभूर्मिधौतशाला
मदरसैः स लसत्सुनामसर्गैः ।
स्फुटरणमनदरसरंगसंगैः
कुसिरजात्वमनतीव कल्पवृक्षः ॥ ४८ ॥

उपवनदिशिजातमागमोद्य—
काममृदंगगुणधुवधगाहाम् ।
नवदलिनिमितनवपवहेम—
लिपमसाहिणुतियामलच्छ नृत्तः ॥ ४९ ॥

अनिशिषमनिशनिमाय नृत्त
मनिशनृत्यनमस्तविबोधवंशीः ।
मुहुरिह नव नवकनुनास
स्तुतिमनुदानवं हरिकार्य ॥ ५० ॥

अथ जिन भवनोपकारणार्थ
विविधवनवागमर्दिगवारवेश. ।
अथ अथ जिनवित्रताविनाश-
विनिहितमप्रियपूर्णविभ्रमाण ॥ ५१ ॥

स्वसमदरवर्णमर्दवं-द-
प्रभवसमोपूर्णमौर्हतवेषम ।

[illegible]

[illegible]

जिनवरजननकर्मप्रमोदहेतो—
महिमपरं त्रिदिवजाः पुनर्विधाय ।
स्मृतजिनतनया दिवं प्रजग्मु—
र्जिनगुणसंस्तुतिसंस्थापितमानसाः ॥ ५९ ॥

प्रतिदिनममरोपनीतभोगा—
ननुभवतः परमेश्वरस्य तस्य ।
कतिपयदिवसैर्गुणस्य बाल्यं
समनुभवा ययतो समुद्रभूते ॥ ६० ॥

हिमकरमुकुलमिवोदगमाशं
पुनरपि पापनवाप्तपूर्णमर्णम् ।
पृथुनरवितनयाहितालयस्य—
स्मरसमरमानस्ये प्रकाशमानम् ॥ ६१ ॥

अतिगिरिजलधिरे नागेन्द्रवीचि-
स्मरगुणगणमंगले समारचितम् ।
प्रणयमनुमनस्वगणोपमं
प्रथमकर्मजनं मनोज्ञकान्तिम् ॥ ६२ ॥

पुनरपि जिनकृपिधर्मविधिं
मनुजान्तरामविविधमं प्रकेन ।
चतुरप नरमित्रवीरण बंधु
ज्ञानममप्रमाणोमात्रविलम ॥ ६३ ॥

इदमकरणमहदा मुखानां
मरुति नवे लघूपरम नाभिवर्ति ।
त्रिदिवजविदितांगजि मधुरा-
गुणानतविज्ञानमवोत्सम कुमारम ॥ ६४ ॥

स्तवनवर्णनेन देव वधिन
मुनिगुणजनां दत्तचीर्मना सर्वोदि ।

र्निवटतामिमप्यर्यनि-
न विगमदंष्ट्रिमया नयवाविष्णुः ॥ ६० ॥
रायचनं निरास्य देव
श्यमयद्धी मांस्य मुग दुःत्यम ।
र्तनिर्विधितानि पुनर्हिम
मिजान्मुधेय नानं मनुष्यमुपम ॥ ६६ ॥
न्मसयहम्न मायवंदी
न भवति नम्र नतो न योगयोगी ।
ानर्विपयौगपर गिताथें
विनु पुगवेन धनं मोक्षयाम ॥ ६७ ॥
न मम न मर्त मदेदि नमः
नृण वनमाति ममराग मर्गीनम् ।
न सन्वर्तिनं धर्म संघे
मरव महोामितजालमानादि ॥ ६८ ॥
रस्तरलयं पुरी मर्तृमौ
मगनिमदे(ति ममिन मामाम ।
न मनिमसमानपनमव
निरयसरि मम मिरेतिदेदुर्शनम ॥ ६९ ॥
पनमचनि मनदसदीसी
विरनिमदंनम्ननम देवासर ।
नुनतिनि विष्णुमे मसमाम
मशुभमनोन विनु भरवनीय ॥ ७० ॥
मनानदुमकामवाम
मानिनिमनवनमाननदीघ्रामन
र्जिवचनवन (गुमेन मनिम्
मनदमंदतदंगुमनाम मयो ॥ ७१ ॥

क्षणदर्शनपूर्वमीलिताक्षी
सरविवशा नु तमेव भावयित्वा ।
अपरमनमपुनर्विलोकयंती
निजमतिमेव निनिंद कापि मुग्धा ॥ ७२ ॥

तदनु गहदयेव सौधशृंगे
विषमतले पदसंधिमादधाना ।
इत दृलिमयचोदिता सखीभिः
कथमपि काचन चेतनां प्रपेदे ॥ ७३ ॥

विकसितवदनांबुजा वराच्छ—
स्फटिकगृहस्य शिरोगताननांगी ।
कुचतटपरिभाव्यलेख्यपत्रा
नभसि गता नलिनीव निर्बभावे ॥ ७४ ॥

निजगृहगुहगर्भस्थिता गवाक्षा—
गतनृपनंदनदर्शनोत्कदृष्टिः ।
रतिरसदयतानुरोधमेका
न कम [illegible] मयीव गुप्यमेस ॥ ७५ ॥

[illegible] —
[illegible] ॥ ३८ ॥

[illegible]
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ ३९ ॥

[illegible]
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ ४० ॥

इति [illegible]
[illegible] ।
[illegible] —
[illegible] ॥ ४१ ॥

[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible] ॥ ४२ ॥

[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible] ॥ ४३ ॥

[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible] ॥ ४४ ॥

प्रणिहितमनसो गुरुस्तवेषु
व्यथितनमो भुजगो विपत्तिकाले ।
अपि लघुगणनेषु देवदेवो
न हि कुरुते स कृती कदाप्यवज्ञाम् ॥८५॥

परिगतदहनं व्युदस्य देहं
भुजगपतिर्भवने बभूव देवः ।
समजनि भुजगी च तस्य देवी—
घदलत्कोमलनीलनीरजाक्षी ॥ ८६ ॥

पद्मावती च धरणश्च कृतोपकारं
तत्कालजातमवधिं प्रणिधाय बुद्ध्वा ।
आनम्रमौलिरुचिरच्छविचर्चितांघ्रि—
मानर्चतुः सुरनरप्रमथैर्जिनेन्द्रम् ॥८७॥

लक्ष्मीधाम श्रीजिनधर्मादपि बाह्यः
कायक्लेशादप्युत्पादे स तपस्वी ।
देवो जातः ख्यातिमयासीदपि भाग्यात्
भूतानन्दो भुवनदेवेष्वसुरेषु ॥८८॥

श्रीमानूर्जितधामतो जिनविभुः श्रीवारणस्यां वसन्
तत्सद्भासितभव्यसन्मुनिभरत् स्फारायशोपपुनिः ।
नागेन्द्रापुरलीननित्यविलसद्भोगोपभोगावहो
देवः सप्रजयोपकारसुधियं दिश्यात्सम सेवोत्सवम् ॥८९॥

इति श्रीवादिराजसूरिविरचिते श्रीपार्श्वजिनेश्वरचरिते
महाकाव्ये कुमारचरितव्यावर्णनं नाम
दशमः सर्गः ।

एकादशः सर्गः ।

धर्मार्थकामसंपन्नाः कन्याः सर्वे महीभृत् ।
वाराणसीमुपसंस्तुत्य जितेन्द्रिय ॥ १ ॥

विवाहमंगलेऽस्यर्थं [illegible] पुनः ।
कुमारान्निवासान्यां [illegible] ॥ २ ॥

[illegible] तव किं नाम करवाणि ।
किं नु [illegible] ॥ ३ ॥

[illegible] वागमन ।
[illegible] ॥ ४ ॥

[illegible] विमर्शे पयसा ।
[illegible] ॥ ५ ॥

[illegible] ।
[illegible] ॥ ६ ॥

[illegible] ।
[illegible] ॥ ७ ॥

[illegible] ।
[illegible] ॥ ८ ॥

[illegible] ।
[illegible] ॥ ९ ॥

[illegible] ।
[illegible] ॥ १० ॥

[illegible] ।
[illegible] ॥ ११ ॥

अदूरक्षेमदा नूनं प्राप्य मार्गमनर्गलम् ।
प्रत्यावर्तितको नाम प्रबुद्धः शुद्धदर्शनः ॥ १२ ॥

दोषदृष्ट्या यदि त्याज्यो विषयस्तद्ग्रहेण किं ? ।
प्रक्षालनाद्धि पंकस्य दूरादस्पर्शनं वरम् ॥ १३ ॥

पित्रे निवेदयन्नेवमिदमेव सदागतः ।
देवैर्लौकान्तिकैरूचे दिवः प्रणतमौलिभिः ॥ १४ ॥

प्रसीद मदनातीत प्रसीद ज्ञानदीपित ।
प्रसीद जगदीशान प्रसीद परमेश्वर ॥ १५ ॥

आजवंजवनिर्वेदस्तव स्वायोंदपादि यः ।
उपचारक्रियया देव कृतार्थैः क्रियतामयम् ॥ १६ ॥

अपारपारसिद्ध्यर्थं व्योमोदयगतस्य ते ।
ज्ञानभानोस्तमोगुल्यं भव्यलोकाः प्रतीक्षते ॥ १७ ॥

मुक्तिवर्त्मनि संध्याता संति दुर्नयतस्कराः ।
ध्वंसने जगतां तेषु स्वप्रभावः प्रभाष्यताम् ॥ १८ ॥

नाथ प्रव्राहस्य देव सर्वैर्बधे प्रतिभमम् ।
यद्दाराभूलबन्धं बंधुनेत्रानतेन्दुना ॥ १९ ॥

अपनस्य ननो देवं जगद्दैवमहोदयः ।
मद्भिमायपोधार्थमोऽहोऽस्पृहायभुरः ॥ २० ॥

मुग्धोऽहं मुग्धे धावनदनु विदिताथिगाः ।
धार्म्यातिमुक्तामेहुगगनोत्थामबोधिना ॥ २१ ॥

विलंघ्य समयं ज्ञाते लौकान्तिकनिवेदिताः ।
सर्वाः दत्तमर्थी देवस्यासीदग्गृहमांसः ॥ २२ ॥

---

१ [illegible] । २ [illegible] । ३ [illegible]
४ [illegible]

मध्यभूमिभृतां मध्ये हेमपीठोपवेशितम् ।
[illegible] ॥ ५३ ॥

[illegible] ।
[illegible] ॥ ५४ ॥

[illegible] ।
[illegible] ॥ ५५ ॥

[illegible] ।
[illegible] ॥ ५६ ॥

[illegible] ।
[illegible] ॥ ५७ ॥

[illegible] ।
[illegible] ॥ ५८ ॥

[illegible] ।
[illegible] ॥ ५९ ॥

[illegible] ।
[illegible] ॥ ६० ॥

[illegible] ।
[illegible] ॥ ६१ ॥

[illegible] ।
[illegible] ॥ ६२ ॥

[illegible] ।
[illegible] ॥ ६३ ॥

[illegible]
[illegible] ॥ ६४ ॥

आरुरुक्षमरायृष्टिपतत्कौसुमी दिवः ।
तत्स्वयंवरमालेव निर्मुक्ता निर्वृतिश्रिया ॥ ३५ ॥

विचित्रमणिनिर्व्यूतरुचिर्मेचकितांबरा ।
शिबिकाथामरस्थानादुपतस्थे तमीश्वरम् ॥ ३६ ॥

अथहृभयनीपालाः तया तं पद्मभक्रम् ।
परं क्रमेण गीर्वाणाः कर्मारिविजयैषिणाम् ॥ ३७ ॥

वियोगेन जगद्भानोर्विंमयपरं परः ।
शोकांधतमसे छन्नं संकुचन्मुखपंकजम् ॥ ३८ ॥

आगमाद् यत्रानंदि पुरंदरपुरस्सरः ।
श्वेभ्यभोगविकत्थाभायश्वग्थवलमीश्वरः ॥ ३९ ॥

इंद्रहस्तप्रतिष्ठस्ततेनाकलंकलधावे ।
अशिग्या प्राग्मुखं तत्र स्फुटिकोपलमंडले ॥ ४० ॥

कृतांजलिर्यशाण प्राग्नमः सिद्धेभ्य इत्यलम् ।
निर्लुलुंचुः पुनकेशान् पंचभिर्दृष्टिमुष्टिभिः ॥ ४१ ॥

तत्केशराशिमादाय मघवा क्षीरवारिधौ ।
निदधौ सोऽपि वन्नासे नाकेनापि न संभ्रमः ॥ ४२ ॥

तेना निमर्गंतस्यापि मुक्तेर्मार्गस्य पूर्वैः ।
ममे तु केवलं तेन मुक्त्या मणिमाल्यया ॥ ४३ ॥

सद्ध्यानविशेषस्य दीक्षानंतरमक्षणे ।
मनःपर्ययनामापि ज्ञानं प्रादुरभूत्प्रभोः ॥ ४४ ॥

प्रणम्य दिवमाना देवः स्तुत्वा स्मरजितं ।
शास्त्रादिपत्यं प्रापत् गुरुर्मैत्रसमानधन ॥ ४५ ॥

गत्वा धर्मोद्यमस्य धर्मराज्यमुपस्थितम् ।
प्रणयपूर्वमध्यौत्रिशिखानतमर्त्यानार्चित ॥ ४६ ॥

शुरसं पायसं सर्वं प्रतिपाद्य यथाविधि ।
इदं प्रथयिता यास्या प्रोवाच पृथिवीपतिम् ॥ ४७ ॥

पुनः स्वल्पविशेषो मे देव सर्वसाधारणविधिः ।
सम्पुरोगांगवर्णिन्यं दृष्ट्वा प्रमाणानि यथायथा ॥ ४८ ॥

पुरस्तयोऽपि देवस्य पुरस्तात्यसंहिताम्
संनिधानं पुनः किं न भुञ्जते भुञ्जतेऽपि वा ॥ ४९ ॥

अनुगम्य नर्मालापं निशम्य च महात्मना ।
महमहीमिरद्रश्रीराशिमाध्यर्यवन्तम् ॥ ५० ॥

पायसे तु यथे क्वापि न कदाचित्ततोमिति ।
मणिमायोगमाख्याय नव्यो रथाणुरिव [illegible] ॥ ५१ ॥

[illegible] तत्र प्रसादेन [illegible] च [illegible] ।
अभूदन्यविजातीनो [illegible] ॥ ५२ ॥

[illegible] ।
[illegible] ॥ ५३ ॥

[illegible] ।
[illegible] ॥ ५४ ॥

[illegible] ।
[illegible] ॥ ५५ ॥

[illegible] ।
[illegible] ॥ ५६ ॥

[illegible] ।
[illegible] ॥ ५७ ॥

[illegible] ।
[illegible] ॥ ५८ ॥

निमानमपरिवेषस्य हेतुं दिशु विभिन्नताम् ।
तेन संदृष्टो देव कोपस्पंदेन कम्पुरा ॥ ९ ॥

रवेरिव मुनेस्तस्य धाता भूमण्डलमृगा ।
प्रत्याप्त दुःसहस्पर्शः सूर्यकान्त इवामृगः ॥ १० ॥

अपूर्वसंभवसंस्पर्शज्योतिरिन्दुरितमः ।
कोपाद्गुरुभिरं यदुरूपं सर्वाश्रयविनाम् ॥ ११ ॥

गर्भलग्नासहस्रेण हसता नाडवन्धुना ।
तेनात्मनाहूतया यान्ते निःशेषितार्थं वयः ॥ १२ ॥

निरीक्ष्य तत्र गंगातं विनानसनिर्बन्धिनम् ।
अन्यथा मानिनीमान भीनतेन निघूणतो ॥ १३ ॥

सुतानुभर्त्रारिरनव्यं किमनेकं निरतन च ।
आनेननगमनस्यापि वाङ्मति विमानः ॥ १४ ॥

नविनाय नपन्याति सकलस्तानकोर्णिविर्जितः ।
[illegible] ॥ १५ ॥

[illegible] ।
[illegible] ॥ १६ ॥

[illegible] ।
[illegible] ॥ १७ ॥

[illegible] ।
[illegible] ॥ १८ ॥

[illegible] ।
[illegible] ॥ १९ ॥

[illegible] ।
[illegible] ॥ २० ॥

फणामणिशिलाघाताच्चूर्णितो जलदव्रजः ।
बभ्रिरे भुजगेंद्रस्य श्वासधूमोद्गमश्रियम् ॥ ८३ ॥

एकत्ववितर्कवीचारध्यानवह्निप्रभावतः ।
घातिकर्मेंधनं सर्वमदीपि विजिगीषणा ॥ ८४ ॥

आविर्बभूव देवस्य तत्क्षणादेव केवलम् ।
परं ज्योतिरनाभासं सर्वतो भासनक्षमम् ॥ ८५ ॥

ततः प्रघोरं जयकारतूर्यै—
र्दिशां कुलं उल्लसितं समंतात् ।
निशम्य निर्मुच्य गुरुं नदेव
बभूव शत्रुः स च कांदिशीकः ॥ ८६ ॥

अनन्यशरणामाशा प्रभुगुणस्य बद्धांजलि—
र्जिनेंद्र जगतांपते जय जगन्निवासेति माम् ।
ननाम मुकुटोल्लसन्मणिमिषद्विलसत्—
फुर्वनं जगन्नयगुरुं रिपुर्विपुलबोधलक्ष्मीनिधिम् ॥ ८

देवाः सर्वचतुर्निकायगणयः संभूय सद्भूतयो
भक्त्योत्साहमयाद्भुतप्रमदतो गाढोपगूढाश्रयः ।
श्रीमच्छ्रीजगतां सर्वमनुभूतां नृत्यैश्च सेवाविधे —
र्धन्यास्य समाप्तशान्तमनसो लोकैकशोभिस्तवम् ॥ ८८

इति श्रीवादिराजसूरिविरचिते श्रीपार्श्वनाथचरिते
महाकाव्ये केवलज्ञान प्रादुर्भावो नाम
एकादशः सर्गः

द्वादशः सर्गः ।

[illegible] ॥ १ ॥

[illegible] ॥ २ ॥

[illegible] ॥ ३ ॥

[illegible] ॥ ४ ॥

[illegible]

[illegible]

यादे यभुवुरसुरेन्द्रभुजप्रभाय—
श्रोन्मादिनाद्रिकथगाथिरदोपमेयाः ॥ ६ ॥

स्नाताः पयोधरपथस्फटिका न यत्राः
कृत्यप्रकोष्ठिदनिनभ्रमदभ्रकूटाः ।
भर्गैरदद्ययपुत्रो नितरामभव्या
मार्गे गमे स्खलनकालिनया विपन्नः ॥ ७ ॥

आकंपमानमलिवद्धमहापताका
स्तंभाग्र शृंगशिखरस्थितहेमपद्माः ।
आगुलयन्निव जयोमलिनांचिताना
रेखम नृकंनभिमानरजांसि पुंसाम् ॥ ८ ॥

नृत्यन्निनो-स्वनजिता र्नलिरीमिनवीं
वामनेनेमेरनमाद्गिमाद्यताग्राः ।
गीवामिनीमुलाम्लाकरिमोदनागां
लीलां नभृवेमिनकाम्पयनानकानम् ॥ ९ ॥

अंनक्ष्यनिनकाल्यनिद्भगत्रांद्—
रदामहामतिमनः हमकाद्मिकुम्भाः ।
स्फारांशुप्राप्तुलिभुरतंतुरम्नवेण
रेखम्म वर्मावर्मं प्रमरेणरिम्णो ॥ १० ॥

प्रवेद्धुः पन्मनकृत्नियमधिति—
स्तुंहितकगृभिन्मन्नरयतृटा ।
पर्येद्रयेव प्रचरम्नाप मेरुवृत्ति
स्फुत्रु प्रमां विरजिमा यर्गानिदेकुल ॥ ११ ॥

चंद्रोरमो गृनदामवियवदारीह
प्राथयाद्विकूट इव दीपयेदवर्गीनैः ।
प्रायधूरीद्विज्जिष्मांदंद्दौ सर्वथा—
देवम्नोंयाद इव विद्यादितमाँ. ॥ १२ ॥

[illegible] —
[illegible] ॥ [illegible] ॥

[illegible]
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ [illegible] ॥

[illegible] —
[illegible] ।
[illegible] —
[illegible] ॥ [illegible] ॥

[illegible] —
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ [illegible] ॥

[illegible]
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ [illegible] ॥

[illegible]
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ [illegible] ॥

[illegible] —
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ [illegible] ॥

[illegible]

[illegible]
[illegible] ॥ [illegible] ॥

[illegible]
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ [illegible] ॥

[illegible]
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ [illegible] ॥

[illegible]
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ [illegible] ॥

[illegible]
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ [illegible] ॥

[illegible]
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ [illegible] ॥

[illegible]
[illegible] ।
[illegible]
[illegible] ॥ [illegible] ॥

शृंगेषु यस्य गुणतुंगतया प्रसिद्धा
सिद्धिं गता गतरजस्कतया जिनेंद्राः ॥ ५१ ॥

आमंद्रदुंदुभिरवप्रतिशब्दभूमे—
रुद्दामगह्वरमुखैरस्य धराधरेंद्रः ।
तस्याधिरोहमसहात्रेव स शंभवस्तुः
शक्रो स्तुतिं रचयति स्फुटोल्लसितोऽस्य हृदः ॥ ५२ ॥

प्राग्भारकंदरविलम्बिशिलाशृंगकूटे
तत्कुंभनिर्भरनिधिजृंभितदेवमूर्ते ।
गिरेः स्वयंप्रभस्य निरोधनस्थे
सयोगिनं प्रति जयाय तुष्टपुष्पवृष्टिः ॥ ५३ ॥

तत्रागमुख्य सदृशः स्वयमेव दृश्यो
मार्गेण योगमयमुख्य सयोगमित्युः ।
शुक्लं पर चतुरस्त्रक्रियमप्रपाति
ध्यानं निधानमिव विमलुहे चकार ॥ ५४ ॥

सयोगिसमयोचितानि तत्रयोगी
ध्यानानलेन स समयन्त्र निलाय दोर्भिः ।
उद्दामकर्मविधिना समसामुत्पाद्य स—
धामादिबंधनमिवत्पना निमाय ॥ ५५ ॥

निर्मित कर्मनिगडे सकलं सदैव
निर्मुक्त तु स्वयमुत्पत्य परमपदोत्सवम् ।
आशंसितं च शरीरमित्युत्सवेन—
स्वर्गेश्वरा निरमिमा निरुपमदेवताः ॥ ५६ ॥

देवेन्द्रवंद्य शम्भुना सर्वविधान—
सानंदसंद्रसमभोगमयविमानैः ।
सम्यक्तिमर्त्य निवर्त्य निवीजप्रतिमाः
प्राप्या स्वयं विरचयन्त्यात्मयोगिवेशे ॥ ५७ ॥

शृंगेषु यस्य गुणतुंगतया प्रसिद्धा
सिद्धिं गता गतरजस्कतया जिनेंद्राः ॥ ४५ ॥

आमंद्रदुंदुभिरवप्रतिशब्दमूर्म—
रुद्दामगह्वरमुखैस्म धराधरेंद्रः ।
तस्यातिचारमसहाय इव स शैलभर्तुः
शृंगे सतुंगशिखरोल्लसितेऽभ्रकूटः ॥ ४६ ॥

हारोपकंठविलसन्मणिशृंगकूटे
तत्कुंभनिर्मितविजृंभितदेवसूर्ये ।
सिद्धैः स्वयंवरवरस्रगिवोपनम्य
संयोगिनं प्रति नवासुरपुष्पवृष्टिः ॥ ४७ ॥

तत्रासमूल्य सद्मः स्वयमेव हृद्यो
मासेन योगमयमुच्य समोक्तुमिच्छुः ।
शुक्लं परं व्युपरतक्रियमप्रपाति
ध्यानं निधानमिव चित्तगृहे चकार ॥ ४८ ॥

पश्चाश्रीममयथान्निति तत्त्वदीप्तो
ध्यानानले स बलवत्यखिलावलोकी ।
उद्घातकर्मविधिना सममायुषा स—
न्नामादिबंधगतमिंधनतां निनाय ॥ ४९ ॥

निर्भिद्य कर्मनिगलं सकलं सदैव
निर्दुस्थ दुःखममृतं पदमध्यरोहत् ।
आसेदिरे च करवारिजकुड्मलाग्रै—
रंतर्दशा नियमिनां निदलप्रदेशाः ॥ ५० ॥

देवस्तदैव समुपेत्य चतुर्निकायै—
रानंदमंदरमनोगतभक्तिभारैः ।
तस्यांतिमां जिनरवेर्विधिविद्भिरिज्या
प्राज्या स्वयं विजयराज्यगतैर्वितेने ॥ ५१ ॥

निस्संगसारकथयैव सुखं प्रयच्छन्
भव्यान् कृतार्थयसि दिव्यनिकामसेव्यः ॥ ५८

त्वामव्ययं सकलवत्सल सप्रभावं
चित्ते करोमि वरमंत्रपदैस्तवीमि।

क्लेशार्णवप्रभवदुःसहदुःखपंकात्
मामुद्धरिष्यति हि धर्मविनोद एषः ॥ ५९ ॥

आस्थां गुणस्तवकृतौ तव देव दक्षा
श्रेयो लभंत यतिकांतगुणार्णवस्य।
तुभ्यं नमोस्तु वरदेव प्रवकुकामाः
सम्यक्त्वतुंगमहिमानमुपाश्रयंति ॥ ६० ॥

स्वाधीनबोधमयनिर्मलदर्पणांत—
र्बिंबागतत्रिविधकालजगत्त्रयाय।
भव्यांबुजाकरविबोधनतत्पराय
श्रीपार्श्वनाथभगवन् भवते नमोऽस्तु ॥ ६१

त्रिभुवनगुरुमेवं सिद्धिलक्ष्मीसमेतं
त्रिभुवनशिखरश्रीसौधशृंगाधिरूढम्।
सविनयमभिनुत्य स्वर्गिणामग्रगण्या
निजपदमभिजग्मुस्तिग्मरश्मिप्रकाशम् ॥ ६२॥

श्रीनिर्याणनवोदयाद्रिशिखरप्रव्यक्तबोधस्तुति-
स्वर्गी प्राग्रहरोपि नीतविनयप्रोद्दामपुण्यांजलिः।

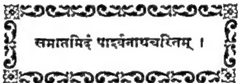
भव्यांभोजविकासबंधवकरो देयात्स यः श्रेयसि
देवो दीर्घमुपास्तिमो जिनरविः कैवल्यसिद्धिः श्रियम् ॥ ६३॥

इति श्रीवादिराजसूरिविरचिते श्रीपार्श्वनाथजिनेश्वरचरिते
महाकाव्ये भगवन्निर्याणगमनं नाम
द्वादशः सर्गः।

निष्पन्नोऽयं नवरससुधास्यंदसिंधुप्रबंधो
जीयादुच्चैर्जिनपतिभवप्रक्रमैकांतपुण्यः ॥ ६ ॥

अन्यर्थीजिनदेवजन्मविभवव्यावर्णनाहारिणः
श्रोता यः प्रसरत्प्रमोदसुभगो व्याख्यानकारी च य ।
सोऽयं मुक्तिवधूनिसर्गसुभगो जायेत किं चैकदा-
स्स्वर्गांतेऽप्युपयाति वाङ्मयलसल्लक्ष्मीपदश्रीपदम्॥ ७

इति प्रशस्तिः ।


समाप्तमिदं पार्श्वनाथचरितम् ।